

ISBN 81-87171-35-9

मूल्य : 12 रुपए

एकलव्य का प्रकाशन

मिट्टी की बात

तथा अन्य कहानियाँ

मिट्टी की बात

तथा अन्य कहानियाँ

चकमक से एक चयन

एकलव्य

का प्रकाशन

मिट्टी की बात
तथा अन्य कहानियाँ

चकमक बाल विज्ञान पत्रिका में प्रकाशित कहानियों से एक चयन

आवरण : धनंजय

प्रथम संस्करण : नवम्बर, 2000 / 5000 प्रतियाँ

मूल्य : 12 रुपए

ISBN 81-87171-35-9

मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार एवं सर रतन टाटा ट्रस्ट के वित्तीय सहयोग से प्रकाशित।

प्रकाशक :एकलव्य
ई–1/25, अरेरा कॉलोनी
भोपाल 462 016 (म.प्र.)
फोन – (0755) 463380
फैक्स – (0755) 461703
ईमेल – eklavyamp@vsnl.com

मुद्रक : राजकमल ऑफसेट प्रिंटर्स, भोपाल

एकलव्य : एक परिचय

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है। जो पिछले कई वर्षों से शिक्षा एवं जनविज्ञान के क्षेत्र में काम कर रही है।

हमारा मुख्य उद्देश्य है ऐसी शिक्षा जो बच्चे व उसके पर्यावरण से जुड़ी हो, जो खेल, गतिविधि व सृजनात्मक पहलुओं पर आधारित हो। इस काम के दौरान हमने पाया कि स्कूली प्रयास तभी सार्थक हो सकते हैं जब बच्चों को स्कूली समय के बाद घर में भी रचनात्मक गतिविधियों के साधन उपलब्ध हों, जिसमें किताबें तथा पत्रिकाएँ एक अहम हिस्सा हैं।

पिछले कुछ वर्षों में हमने अपने काम का विस्तार प्रकाशन के क्षेत्र में भी किया है। बच्चों की पत्रिका चकमक के अलावा स्रोत (विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी फीचर) तथा संदर्भ (शैक्षिक पत्रिका) हमारे नियमित प्रकाशन हैं। शिक्षा, जनविज्ञान, बच्चों के लिए सृजनात्मक गतिविधियों के अलावा विकास के व्यापक मुद्दों से जुड़ी किताबें, पुस्तिकाएँ, सामग्री आदि भी एकलव्य ने विकसित एवं प्रकाशित की हैं।

अपनी बात

उम्र चाहे जो भी हो कहानी हर उम्र में भाती है। फर्क यह होता है कि उम्र और समझ के विस्तार के साथ–साथ कथ्य का स्तर बदलता और ऊँचा होता जाता है। कहानियों की विषय-वस्तु और प्रस्तुतिकरण में विविधता एक ज़रूरी चीज़ हो जाती है। दादी-नानी, अम्मा की कहानियाँ छोटी और पुरानी पड़ जाती हैं। कुछ नए, कुछ अलग की चाह लगातार बढ़ती जाती है।

किशोरावस्था में हरेक को तरह-तरह के अनुभवों से गुज़रना होता है। इसी दौर में निजी और सामाजिक संवेदनाओं, अनुभूतियों के बनने और विकसित होने की शुरुआत होती है। व्यक्तिगत, पारिवारिक अनुभवों के साथ आस-पास के वातावरण से रोज एक नया सम्बंध बनता है। इस नएपन को समझने, खुद को अभिव्यक्त करने और अपनी जगह बनाने की प्रबल इच्छा इसी समय शुरू होती है। इस प्रक्रिया में साहित्य, खासकर अच्छी कहानियाँ बहुत मददगार होती हैं।

एकलव्य के प्रकाशनों में छोटे बच्चों के लिए तो कुछ हद तक सामग्री विकसित हो पाई है। किन्तु किशोरों के लिए गतिविधि पुस्तकों के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं हो पाया है। हाँ, एकलव्य द्वारा प्रकाशित चकमक में ज़रूर ऐसी सामग्री प्रकाशित हुई है। लिहाज़ा चकमक में प्रकाशित कहानियों का संग्रह निकालने का विचार उपजा। और यह एक संग्रह सामने है।

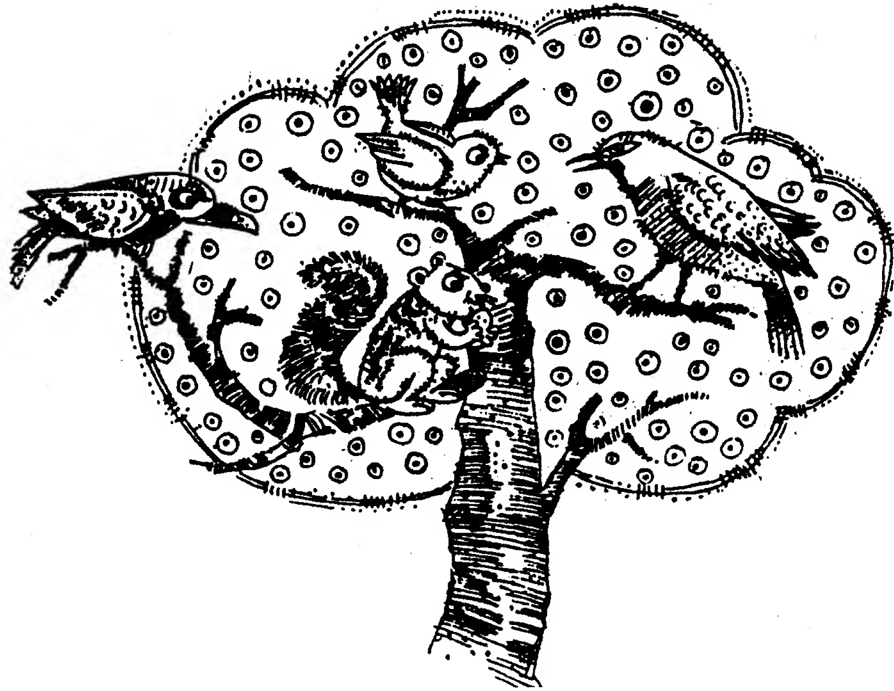
चयन करते वक्त हमने उन कहानियों को प्राथमिकता दी जो खासतौर से चकमक के लिए लिखी गई हैं। इनमें भी समसामयिक मुद्दों वाली कहानियों को चुना गया। स्वतंत्रता, सह-अस्तित्व, लिंगभेद, पर्यावरण चेतना के साथ विषम परिस्थितियों से जूझना इन कहानियों का मुख्य स्वर है।

हमारी कोशिश यह थी कि इस संग्रह में किशोरवय के विविध रंग उपस्थित हो सकें। अपरिहार्य कारणों से यह संभव न हो सका। यह संग्रह कोई मील का पत्थर साबित होगा ऐसा हमारा दावा नहीं है। हाँ, उम्मीद करते हैं कि किशोर पाठकों को ये कहानियाँ पसंद आएँगी।

पाठकों की टिप्पणियों से हमें इस कड़ी को आगे बढ़ाने में मदद मिलेगी।

एकलव्य

इस संग्रह में



पेड़ किसका है?

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

एक शाम जब सारा आसमान लौटते हुए पक्षियों के कोलाहल से गूँज रहा था, सूरज अपनी किरणों के जाल को पहाड़ियों व पेड़ों की फुनगियों से समेटकर क्षितिज के उस पार जाने की तैयारी कर रहा था, तब नीम के पेड़ पर बैठे पक्षी व गिलहरियाँ एक खास मुद्दे पर चर्चा कर रहे थे। मुद्दा था – 'आँगन में खड़े नीबू के पेड़ पर रह रही अकड़बाज़ बुलबुल।'

''कितना घमण्ड है उस ज़रा-सी चिड़िया को! सीधे मुँह बोलना ही नहीं चाहती किसी से।'' नन्हीं गौरैया ने गुस्से के मारे एक टहनी से दूसरी टहनी पर फुदकते हुए कहा।

''तुम बात करने का रोना रो रही हो मौसी!'' गुलबी मैना ने अपनी पीली चोंच पंखों में साफ की, फिर कहा, ''वह तो देखना तक पसन्द नहीं करती। देखा नहीं कैसी बुरी सूरत बना लेती है। सिर पर कंघी करने से सुन्दर बाल खड़े हो जाते हैं और आवाज़ भी कितनी कठोर हो जाती है। एकदम बदसूरत नज़र आने लगती है।''

''मुझसे पूछो कि क्या गुज़री?'' छुटकी गिलहरी, जो पिछले पैरों पर बैठी दोनों हाथों से अमरूद पकड़कर कुतर रही थी, आगे आकर बोली, ''मैं तो पका अमरूद ढूँढने उधर चली गई। इतने में तो वह इतनी ज़ोर से

चीखती हुई मेरे पीछे आई कि मैं घबराकर डाली से नीचे गिर पड़ी। मेरे पैरों में अब भी दर्द है।''

सब बढ़ा-चढ़ाकर अपनी व्यथा-कथा सुना रहे थे। कालू कौवा अब तक सबकी बातें सुन रहा था। वह भारी आवाज़ में बोला, ''ये मीठा बोलने वाली चिड़ियाँ तो होती ही हैं स्वार्थी और धोखेबाज़। कोयल को ही देखो। दुनिया ने उसकी मीठी तान तो सुनी है, पर कौन जानता है कि वह चालाकी से अपने अण्डों की देखभाल हमसे करवाती है। हम असलियत समझें इससे पहले उसके बच्चे हमें चिढ़ाते हुए उड़ जाते हैं। मुझे ऐसी चिड़ियों से सख्त नफ़रत है। सबकी बुराई से डरता हूँ, मेरा वश चलता तो पास नहीं फटकने देता उस बदतमीज़ बुलबुल को।''

''लेकिन अब क्या किया जा सकता है। अब तो उसने घोंसला भी बना लिया है। शायद बच्चे भी हैं।'' पंडुक को लड़ाई-झगड़े की बात से ज़रा डर लगता है।

''तो क्या हुआ!'' कालू सख्ती से बोला, ''जब वह हमारे पेड़ पर रहकर हमें आँखें दिखा सकती है, तो हम उसे खदेड़ नहीं सकते क्या?''

''कालू दादा ठीक कह रहे हैं!'' गुलबी ने समर्थन किया, ''बुलबुल तो बागों में रहने वाली चिड़िया है, हमारे घरेलू पेड़ों पर उसका क्या हक है? फिर रहे तो रहे पर अकड़ तो न दिखाए...।''

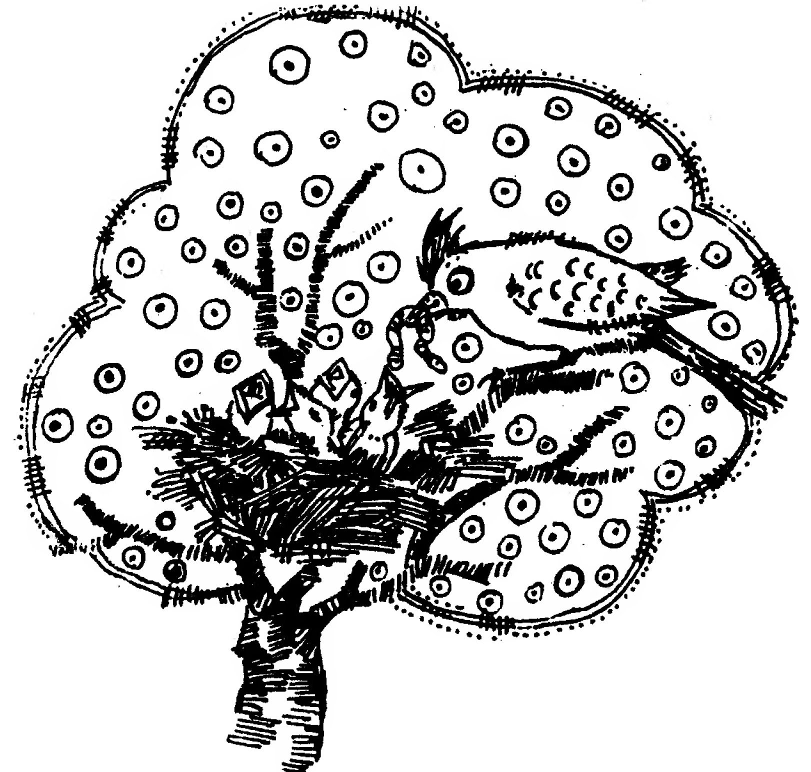
''अजी रहे भी क्यों?'' छुटकी ने ज़ोर देकर कहा। वह अपनी चोट और अपमान के लिए बुलबुल को माफ नहीं कर पा रही थी।

''ठीक है बुलबुल को सबक सिखाना ज़रूरी है'', सबने समर्थन किया।

जिस समय यह प्रस्ताव पास हो रहा था, बुलबुल अपने घोंसले में बच्चों को दाना चुगा रही थी। वह बारी-बारी से तीनों की चोंच में दाना दे रही थी, पर उन्हें सब्र कहाँ था। गर्दन ताने, चोंच फाड़े बार-बार माँगे जा रहे थे। उनमें एक बच्चा ज़्यादा चुलबुला और भुक्खड़ था। वह हर बार आगे चोंच बढ़ाकर माँ से दाना छीन लेता था। इसीलिए दोनों की तुलना में वह कुछ बड़ा और तन्दुरुस्त दिखने लगा था। यही नहीं, वह चुपचाप घोंसले से निकलकर बाहर उड़ने के मनसूबे भी बनाने लगा था। घोंसला उसे छोटा व उबाऊ लगने लगा था। दोनों छोटे बच्चे कमज़ोर होने के बावजूद अपने भाई की नकल करके घोंसले से बाहर झाँकने की कोशिश करते। उनके पंख अभी उग ही रहे थे पर उन्हें ही फड़फड़ाने का शौक पूरा करने लगे थे। वे माँ के लाख समझाने पर भी कुछ न कुछ बोलते रहते, ''माँ आसमान कितना बड़ा है? माँ! बाहर की दुनिया कितनी खूबसूरत होगी? बताओ ना? माँ! हमारे पंख कब बड़े होंगे?... हमें जल्दी से उड़ना है दूर तक। माँ हमें खुद कब दाना और कीड़े-मकोड़े चुगने दोगी..? यहीं बैठे-बैठे खाते ऊब गए हैं, माँ।''

''अभी कुछ समय और इन्तज़ार करो मेरे बच्चो,'' बुलबुल अपने नन्हे-मुन्नों की बातें सुनकर फूली नहीं समाती। बच्चों से बोलते समय उसकी बोली बेहद मीठी लगती। ''तुम बहुत जल्दी उड़ना भी, दुनिया भी देखना... कुछ दिन मेरे साथ भी तो गुज़ार लो मेरे बच्चो।''

बच्चों की बातें सुनकर बुलबुल खुश तो होती, पर साथ ही कई



आशंकाओं से भी घिर जाती। पन्द्रह दिन तक तो किसी को हवा तक नहीं लगी कि नीबू के झुरमुट में एक नहीं तीन-तीन अण्डों की देखभाल हो रही है। लेकिन जब अण्डे फोड़कर बच्चे निकले तो बुलबुल की मुसीबत हो गई। अब वे अण्डे तो थे नहीं जिन्हें दबाए रखती। आँखें भी नहीं खुलीं कि शैतान बच्चों की चीं–चीं, चूँ..चूँ शुरू हो गई पूरे ज़ोर से। और हुआ वही जिसका डर था। कितनी ही चिड़ियाँ नीबू के पेड़ के आसपास चक्कर काटने लगीं और किसी न किसी बहाने बातें करने लगीं, ''क्या कर रही हो बहन?'' नन्हीं गौरैया आ जाती, ''क्या तुम्हारे यहाँ मेहमान आए हुए हैं? बड़ा शोर मचा रहता है।''

''बगीचे में तो फूलों के आसपास रहती होगी? हमारा यह काँटेदार पेड़ कैसे भा गया बुलबुल रानी?'' गुलबी आँखें नचाकर कहती।

''तुम बहुत सुरीला गाती हो, हमें भी एक-दो गीत सुना दो ना।'' छुटकी गिलहरी पूँछ को डुलाती हुई कहती। पर सबसे ज़्यादा वह कालू कौवे से डरती जो काँव-काँव करता जब तब मँडराता रहता।

'इनके इरादे नेक नहीं हैं' बुलबुल सोचती और खतरे को टालने की गरज से कहती, ''मैं ज़रा व्यस्त हूँ।.. फिर आना।''

उस समय न चाहते हुए भी उसकी आवाज़ कठोर हो जाती। कभी-कभी तो उसे दुत्कारना भी पड़ जाता।

'इतना घमण्ड?' सभी को यह बात बहुत अखरी और बढ़ा-चढ़ाकर कुछ नमक-मिर्च लगाकर बात ऐसी बनाई कि आनन-फानन में बुलबुल को भगाने की योजना बन गई। इसकी ज़िम्मेदारी सौंपी गई कालू कौवे को। अन्धा क्या चाहे दो आँखें। कालू तो जाने कब से इसी मौके की तलाश में था। बुलबुल ने कई बार उसे बुरी तरह खदेड़ दिया था। लेकिन अभी तक कालू उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाया था। यह मौका पाकर वह बड़े उत्साह से बोला, ''आपने मुझे जो काम सौंपा है उसे मैं दिल से पूरा करने की कोशिश करूँगा।''

दूसरे दिन सुबह जब सूरज की किरणें पत्तों पर थिरकने लगीं। जेल से छूटे कैदियों की तरह चहकते हुए पक्षी भोजन की तलाश में उड़ गए। पेड़ों पर गिलहरियों की किट्–किट् शुरू हो गई थी। मानो छैनी-हथौड़ा लेकर कोई पत्थर तराश रहा हो। बुलबुल ने भी अपने बच्चों को तमाम नसीहतें दीं। जैसे कि, ''ज़्यादा ज़ोर से मत बोलना, घोंसले से बाहर सिर मत निकालना, कोई खतरा हो तो मुझे पुकार लेना.. मैं पास ही तुम्हारे लिए कुछ कीड़े चुगूँगी।'' और उड़ गई।

कालू ने मौका देखा और चुपके से घोंसले तक पहुँच गया। हालाँकि घनी टहनियों और पत्तों से उसे खासी दिक्कत हुई पर घोंसले में जो नरम-गरम बच्चे देखे तो मुँह में पानी आ गया। उसके मुँह से बरबस ही निकल पड़ा, ''वाह! क्या बात है।''

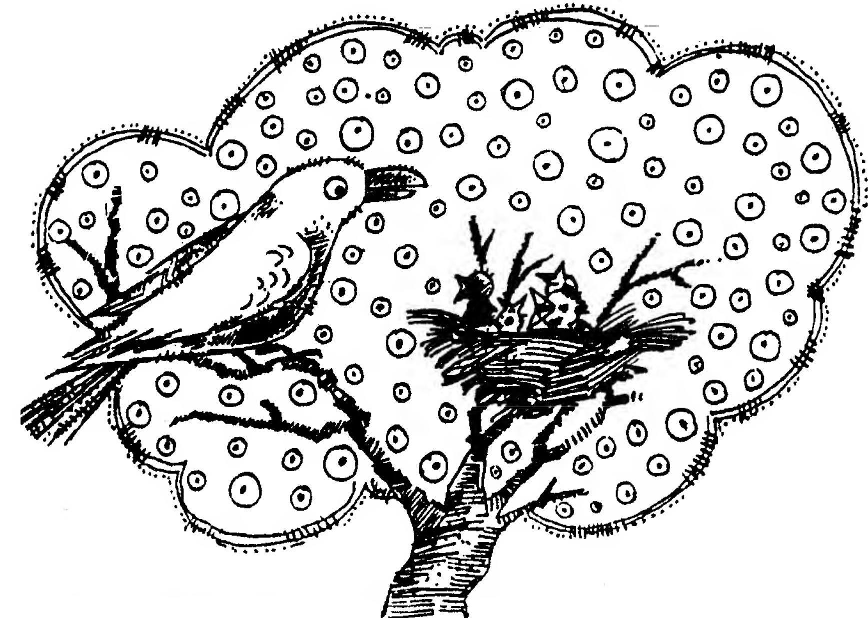
''कौन है?'' तीनों बच्चे चौंके। कालू को लगा जैसे उसकी चोरी पकड़ी गई हो। वह दो कदम पीछे हट गया।

''अरे, डर लगा क्या?'' बड़ा बच्चा गर्दन उठाकर सीने को फुलाने का प्रयास करता हुआ बोला, ''यहाँ डर की कोई बात नहीं है।''

''अभी हमारी माँ भी नहीं है... हमसे दोस्ती करोगे?'' बीच वाला बच्चा आगे आकर बोला।

''दोस्ती!'' कालू चौंका।

''दरअसल हमें एक दोस्त की सख्त ज़रूरत है जो बहादुर हो,



ताकतवर हो। हमें आसमान की सैर कराए... हमसे खूब बातें करे।'' बड़े बच्चे ने कहा।

''क्या है कि हमारी माँ न तो हमें ज़ोर से बोलने देती है न घोंसले से बाहर देखने देती है... लेकिन हम खूब गाना चाहते हैं... खूब दूर तक उड़ना भी चाहते हैं। क्या आप हमारी मदद करेंगे?'' छोटा बच्चा बड़े के दबाव से निकलता हुआ बोला।

कालू हैरान था। बच्चे निर्भीकता से बोले जा रहे थे। उन्हें न किसी खतरे का अहसास था, न मुसीबत की चिन्ता।

'ऐसे में इन पर वार करना तो बेहद शर्मनाक काम होगा।' कालू ने सोचा।

बच्चों का बोलना जारी था, ''हमारी माँ कहती है कि यहाँ हमारे कई दुश्मन हैं जो हमें नुकसान पहुँचा सकते हैं.... लेकिन हमें तो इस बात पर यकीन नहीं होता। और हमें आप दुश्मन तो हरगिज़ नहीं लगते... माँ ने कहा था कि जो बहादुर होते हैं - बच्चों के दुश्मन नहीं होते। है न?''

''हाँ-हाँ....,'' कालू की जुबान सूखने लगी। बोलने के लिए उसे शब्द ही नहीं मिल रहे थे।

''कालू, तुम वहाँ क्या कर रहे हो हम जानने के लिए बेचैन हैं। जल्दी अपना काम करो और वापस आ जाओ।'' नीम के पेड़ से आती हुई पुकार कालू ने सुनी। उसने अपने इरादे को मन में दोहराते हुए बच्चों की ओर एक नज़र डाली, जो बड़े विश्वास और प्यार से उसे देख रहे थे। वे दोनों एक-दूसरे से आगे आकर बात करने की कोशिश कर रहे थे। उस समय कालू को अपना इरादा काफी घटिया लगा। उसने थकी-सी आवाज़ में कहा, ''अच्छा चलता हूँ फिर मिलेंगे।... नन्हें दोस्तो।''

''अच्छा! लेकिन कल ज़रूर आना। हम इन्तज़ार करेंगे।'' तीनों बच्चों की आवाज़ कालू का पीछा करती रही। वह जैसे जान छुड़ाकर नीम के पेड़ पर चुपचाप आ बैठा।

''तुम कामयाब नहीं हुए न!'' नन्हीं ने शरारत से कहा, ''तुम्हारी सूरत बता रही है।'' कालू चुप रहा।

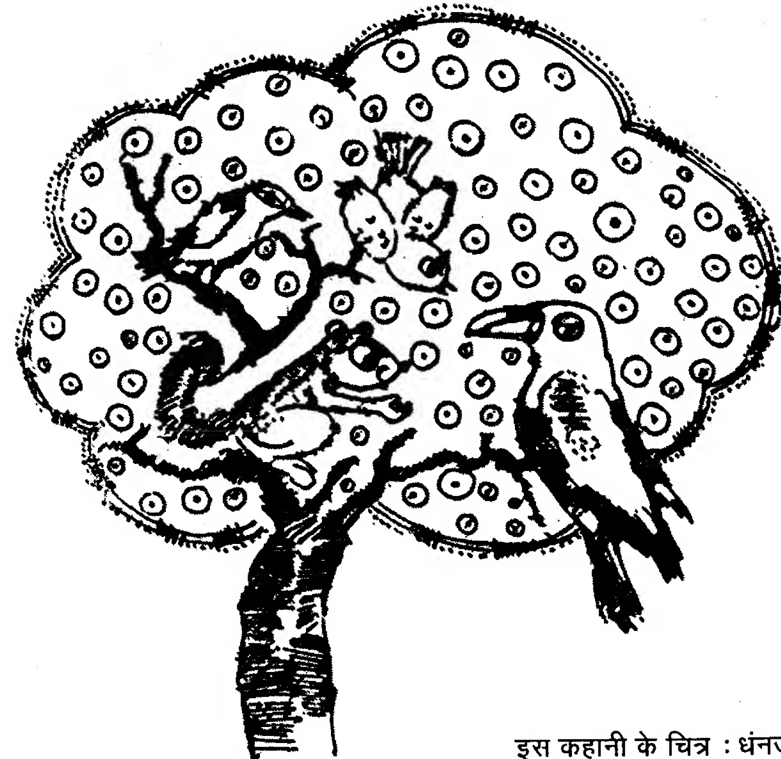
''कालू दादा तुम तो ऐसे बैठे हो जैसे बुलबुल ने मारकर भगा दिया हो।'' छुटकी ने छेड़ते हुए कहा, ''लगता है बुलबुल से हार गए।''

''बुलबुल से नहीं बेवकूफ गिलहरी!.... उसके नन्हें बच्चों से जिनके शरीर पर अभी पंख भी नहीं हैं।'' कालू आवेश में बोला।

''यह नहीं हो सकता।'' सभी ने अविश्वास से कहा।

''यही हुआ है,'' कालू का स्वर धीमा हो गया, ''मैंने तय किया है कि जब तक बच्चे उड़ने लायक नहीं हो जाते, उन्हें तंग नहीं करेंगे.... यह नीबू का पेड़ तब तक उन्हीं का है।''

ऐसा कहते समय उसकी आँखों में सन्तोष था। जब उसने अपने साथियों की ओर देखा तो यह जानकर बेहद खुश हुआ कि कोई उसकी बात से नाखुश नहीं था। सभी बड़े ध्यान से घोंसले से आती नन्हीं आवाज़ों को सुन रहे थे। ●●●



इस कहानी के चित्र : धंनजय



उड़ने का सुख

से.रा. यात्री

मोनू ने चिड़िया बेचने वाले से एक छोटी-सी, रंग-बिरंगी चिड़िया खरीदी। चिड़िया के साथ उसने चिड़िया का पिंजड़ा भी खरीद लिया।

मोनू सुबह-शाम, छोटी-छोटी प्यालियों में पानी और चने या मूँग की भीगी दाल डालकर पिंजड़े में रखता और उसके पास देर तक बैठा रहता।

सुबह आँख खुलते ही अपने सिरहाने स्टूल पर रखे पिंजड़े पर उसकी नज़र जाती, तो वह होंठों से सीटी बजाकर चिड़िया का ध्यान अपनी ओर खींचता। रात को सोने से पहले वह चिड़िया से बातें करता रहता।

हालाँकि चिड़िया छोटी-सी ही थी, फिर भी चिड़िया के लिए वह पिंजड़ा छोटा पड़ता था। वह अपने पिंजड़े में अक्सर उदास बैठी रहती थी। मुंडेर पर आकर बैठने वाली चिड़ियों की तरह वह चहचहाती भी नहीं थी। मोनू चिड़िया को खुश रखने के लिए कभी रोटी मसलकर चूरमा बनाता, कभी पिंजड़े में बाजरा या चावल डालता। कभी-कभी मोनू की माताजी भी चिड़िया की खैर-खबर लेती रहती थीं।

मोनू जितने समय भी घर में रहता, बराबर चिड़िया के पिंजड़े के आसपास ही मँडराता रहता था। चिड़िया कभी-कभी फुदककर उड़ने की कोशिश करती, मगर पिंजड़े की लोहे की तीलियों से टकराकर रह जाती।

अपनी ओर से मोनू चिड़िया को बहुत खुश रखने का प्रयास करता था। पर पिंजड़े में बन्द वह एकाकी पंछी चहचहाना तो जैसे भूल ही गया था।

मोनू के पिता प्रकाश बाबू ने उसे कई बार प्यार से समझाया, ''बेटा, जब से तुमने यह मुनिया चिड़िया खरीदी है, हर समय इसी के खेल में लगे रहते हो। इस तरह तो तुम्हारी सारी पढ़ाई ही चौपट हो जाएगी। क्या यह नहीं हो सकता कि तुम इस चिड़िया को पिंजड़े से निकालकर मुंडेर पर बिठा दो। और वहीं दो प्यालियों में इसके लिए दाना-पानी रख दो?''

पर मोनू को चिड़िया से बहुत लगाव हो गया था और वह उसे पिंजड़े से मुक्त करने को तैयार नहीं था। वह पिताजी से कहता, ''मैंने इसे उड़ाने के लिए थोड़े ही लिया है। आप देखते नहीं हैं कि मैं इसे कितना प्यार करता हूँ।''

एक दिन प्रकाश बाबू के मित्र सरीन साहब ने भी मोनू को समझाया, ''बेटे! यह आकाश में उड़ने वाला आज़ाद पंछी है। भगवान ने इसे उड़ने के लिए नन्हें-नन्हें, रंग-बिरंगे पंख दिए हैं। गाने के लिए गला दिया है। यह पेड़ों की शाखों पर बैठकर गाएगा तो बहुत खुश होगा। तुम्हारा पिंजड़ा तो इतना छोटा है कि यह इधर-उधर उड़ तक नहीं सकता।'' पर मोनू को सरीन साहब की बात भी अच्छी नहीं लगी। वह पंछी को पिंजड़े में ही रखने की अपनी ज़िद पर अड़ा रहा।

इसी दौरान एक दिन नगर में दंगा हो गया। पूरे शहर में कर्फ्यू लग गया। प्रकाश बाबू अखबार में काम करते थे, इसलिए उन्हें दफ्तर जाने के लिए कलेक्टर साहब के दफ्तर से पास मिल गया। मगर मोनू को स्कूल बन्द हो जाने के कारण घर में ही रहना पड़ गया।

नगर की स्थिति सामान्य होने से पहले कर्फ्यू के हटने की कोई सम्भावना नहीं थी। शुरू-शुरू में तो स्कूल बन्द होने की मोनू को बहुत खुशी हुई। क्योंकि वह घर में रहकर खूब ऊधम मचा सकता था। मगर जब कर्फ्यू लम्बा खिंचने लगा और मोनू को घर की दहलीज़ से निकलना भी कठिन पड़ गया तो वह बेचैन रहने लगा। टी.वी. के कार्यक्रम देखते-देखते उसे उकताहट होने लगी। मोहल्ले के लड़कों से भी वह बाहर जाकर बातें नहीं कर सकता था। गली में सारा दिन और पूरी रात पुलिसवाले बन्दूक लिए घूमते रहते थे।

मोनू के पिताजी जब भी घर लौटते, मोनू उनसे बस एक ही बात पूछता, ''पापा जी कर्फ्यू कब हटेगा?''

प्रकाश बाबू भी एक ही जवाब देते, ''मोनू बेटे, शहर की हालत सँभलते ही कर्फ्यू खुल जाएगा।''

जब दस-बारह दिन गुज़र गए तो लाऊड-स्पीकर पर घोषणा सुनाई पड़ी कि अगले दिन सुबह आठ बजे से दोपहर बारह बजे तक कर्फ्यू में ढील दी जाएगी। अगर शहर में अमन रहा तो कर्फ्यू में और भी ढील दी जाएगी।

अमन का अर्थ मोनू की समझ में नहीं आया। उसने अपने पिताजी से उसका मतलब पूछा। प्रकाश बाबू ने बतलाया, ''बेटे अमन का मतलब शान्ति है। अगर शहर में कर्फ्यू हटने पर शान्ति बनी रहेगी तो आगे कर्फ्यू को ज़्यादा देर के लिए हटा दिया जाएगा।''

मोनू कर्फ्यू हटने की बात सुनकर खुशी से झूम उठा और बोला, ''तो गली में जाने से पुलिस अब नहीं रोकेगी न?''

प्रकाश बाबू बोले, ''हाँ! कल सुबह आठ बजे से दोपहर बारह बजे तक तुम घर के बाहर निकल सकते हो।''



इसी समय बाहर बरामदे में खड़खड़ाहट की आवाज़ आई और साथ ही चिड़िया के चीखने का स्वर भी सुनाई पड़ा। मोनू दौड़कर कमरे से बाहर गया। उसने देखा कि वहाँ एक बिल्ली थी और वह पिंजड़े की तीलियों पर पंजे मार रही थी। छोटी-सी चिड़िया बिल्ली के डर से लगातार पंख फड़फड़ा रही थी।

मोनू को देखते ही बिल्ली भाग गई। मोनू पिंजड़ा उठाकर कमरे में ले गया। वह चिन्ता के स्वर में अपने पिता से कहने लगा, ''पापा बाहर एक बिल्ली आ गई थी और मुनिया का पिंजड़ा तोड़ रही थी।''

मोनू के पिता बोले, ''बेटा! बिल्ली को इस घर में चिड़िया के होने का पता चल गया है। बिल्ली अब बार-बार आएगी। जब तुम घर में नहीं होगे तो चिड़िया का पिंजड़ा तोड़ने की कोशिश करेगी और वह किसी दिन इस नन्हीं-सी चिड़िया की जान ले लेगी।''

मोनू चिड़िया की जान जाने की आशंका से काँप उठा और सोचते हुए पूछने लगा, ''फिर क्या करें पापा?''

प्रकाश बाबू ने पिंजड़े की चिड़िया के बारे में कुछ नहीं कहा। उन्होंने मोनू से पूछा, ''अच्छा मोनू बेटे, यह तो बतलाओ कर्फ्यू पूरी तरह से हट जाए तो तुम्हें कैसा लगेगा?''

मोनू खुशी से ताली बजाकर बोला, ''फिर तो बड़ा मज़ा आएगा। हम घर से बाहर जा सकेंगे। मैं अपने स्कूल जाने लगूँगा।''

''बस तो तुम यही बात पिंजड़े में बन्द चिड़िया के बारे में समझो। इस छोटे-से पिंजड़े की कैद से जब यह जहाँ चाहे उड़ सकेगी तो इसे कितनी खुशी होगी।''

पिता की बात सुनकर मोनू की आँखों में सोचने का भाव उभर आया और अगले क्षण ही उसने पिंजड़ा उठाकर कहा, ''चलो पापा, ऊपर छत पर चलकर मुनिया को पिंजड़े से आज़ाद कर देते हैं।''

प्रकाश बाबू के चेहरे पर मुस्कान थिरक उठी। वे मोनू के साथ छत पर चले गए। मोनू ने खुली छत पर पिंजड़ा रखा और पिंजड़े का सींखचा खोल दिया। चिड़िया पिंजड़े से बाहर निकलकर पिंजड़े के आसपास घूमने लगी, जैसे उड़ना भूल गई हो। पर थोड़ी देर बाद ही वह उड़ी और मुंडेर पर जा बैठी।

कुछ क्षणों के बाद चिड़िया ने अपने पंख पसारे और आकाश में उड़ गई। चिड़िया का पिंजड़ा खाली देखकर मोनू के चेहरे पर उदासी छा गई। उसके पिता ने उसका कंधा थपथपाकर सामने के पीपल के पेड़ पर बैठी सैकड़ों चिड़ियों की ओर संकेत किया, ''देखो, इतनी सारी आज़ाद चिड़ियाँ चहचहाती हुई कैसी सुन्दर लग रही हैं।''

मोनू ने भोलेपन से पूछा, ''पापा क्या हमारी चिड़िया भी उनमें ही जा मिली होगी?''

प्रकाश बाबू हँसकर बोले, ''तुम्हारी चिड़िया भी उनमें हो सकती है। मोनू! हो सकता है वह कभी हमारी मुंडेर पर भी आकर बैठ जाए।''

मोनू पिता की बात से आश्वस्त होकर बोला, ''तो ठीक है। अब मैं उसके लिए छत की मुंडेर पर ही दाना रख दूँगा और पानी की प्याली भी यहीं टिका दूँगा।'' ●●●



इस कहानी के चित्र : हूताराम अधिकारी



गुड़िया नहीं जाएगी

शकुन्तला सिरोठिया

गुड़िया न बहुत गरीब घर की थी और न उसके घर के लोग अनपढ़ ही थे। पाँच भाइयों की अकेली बहन थी। किन्तु घर की व्यवस्था ठीक नहीं होने से किसी के खाने-पीने का कोई समय नहीं था। माँ दिन भर चौके के काम में ही फँसी रहती। साथ में गुड़िया को भी लगाए रहती। उसके भाई तो बाहर घूमते-फिरते स्कूल भी चले जाते। किन्तु गुड़िया की किसी को चिन्ता नहीं थी। अकेली बहन होने पर भी भाई उसका ध्यान नहीं रखते थे।

गुड़िया देखने-सुनने में भी अच्छी थी। बड़ी-बड़ी प्यारी-सी आँखें थी। किन्तु एक बार जब आँखों में तकलीफ थी तो किसी ने ठीक से इलाज नहीं कराया। फल यह हुआ कि एक आँख में फूली पड़ गई। दिन भर सिर झुकाए संकोची गुड़िया काम में लगी रहती। मुँह और आँखों पर बाल

गिरते तो कभी सिर झटककर उन्हें पीछे कर देती।

दिन भर गुड़िया काम में लगी रहती। दौड़-दौड़कर भाइयों को चाय देना, प्यालियाँ उठाकर लाना, उन्हें धोना, खाना परोसना, कभी माँ का चौके के कामों में हाथ बँटाना आदि उसे ही करने पड़ते थे। आस-पड़ोस में जाना, खेलना या सखी-सहेलियों से बात करना गुड़िया ने जाना ही नहीं। यह सब उस नन्हीं बच्ची के भाग्य में ही शायद नहीं था। किसी की बात का विरोध करना उसने सीखा ही नहीं था। उसके सीधे स्वभाव का सब फायदा उठाते थे। भाइयों का इतना काम करने पर भी कोई कभी उससे प्यार से नहीं बोलता था। वह उसकी आशा भी नहीं करती थी। माँ तारीफ करती तो उसका अर्थ होता कि उसे और काम करना चाहिए। ''हमारी गुड़िया बड़ी सीधी है। बहुत सहारा देती है मुझे।''

कभी माँ कहती, ''गुड़िया देख तो तेरा भाई कैसा नखरेबाज़ है। अरे, नहीं खाना था तो लिया ही क्यों था। पूरी रोटी थाली में छोड़ गया है। तू ही खा ले बेटा। इस महँगाई में भला कहीं फेंका जा सकता है, अन्न!''

बेचारी गुड़िया सिर नीचा करके खा लेती। इस प्रकार दिन में एक-दो बार समय-बेसमय उसे कभी भूख और बिना भूख के भी खाना पड़ जाता



था। उसकी उम्र बारह वर्ष हो गई किन्तु उसकी बाढ़ रुक गई थी।

उसके पिता जी बाहर काम करते थे। घर में बहुत नहीं रह पाते थे। घर की किसी बात में उनका दखल नहीं था। इस प्रकार घर भरा-पूरा होने पर भी गुड़िया अनाथ थी। किसी को उसकी चिन्ता नहीं। उसकी कोई माँग नहीं थी। जैसा खाने को दे दो खा लेती थी। जैसा पहनाओ पहन लेती थी। बरसात के पानी में भींग-भींगकर काम करने के कारण उसके पैरों की उंगलियाँ सड़ जातीं तब उसकी माँ उसमें हल्दी और तेल लगा देती। जैसा भी था गुड़िया सब बिना किसी शिकायत के सह जाती। इससे अच्छी ज़िन्दगी की उसे कल्पना भी नहीं थी।

एक बार उसकी बुआ कुछ दिनों के लिए आई तो उन्होंने कहा, ''भाभी गुड़िया को मेरे साथ भेज दो। मैं इसे पढ़ाऊँगी।''

गुड़िया बुआ के साथ चली गई। उसे वहाँ स्कूल में भर्ती करा दिया गया, किन्तु जल्दी ही वहाँ से निकाल भी लिया। स्कूल में वह किसी से नहीं बोलती, कुछ पूछने पर भी किसी बात का उत्तर नहीं देती। कक्षा में जो काम दिया जाता वह भी नहीं करती। बुआ के लिए गुड़िया एक समस्या बन गई। हारकर उन्होंने उसे व्यस्त रखने के लिए घर के काम में लगाना शुरू कर दिया। इसकी तो वह आदी थी, उसका मन लग गया। उसने धीरे-धीरे खाना बनाना सीख लिया। चीज़ों को तरतीब से लगाती। सफाई पसन्द थी वह। रसोई के हर सामान को पोंछकर यथास्थान रखती। बुआ को सन्तोष हुआ कि गुड़िया का मन अब उनके यहाँ लग गया है, लेकिन अभी भी वह खुद किसी से बात नहीं करती। कभी खुद माँगकर खाना नहीं खाती।

घर की नौकरानी भी एक लड़की थी – सुमन। गुड़िया से दो-तीन वर्ष बड़ी। उससे वह हिल-मिल गई। जब बुआ नहीं होती तो वह सुमन से खुलकर बात करती। अब कभी-कभी खिल-खिलाकर हँसती भी थी। उसके मन की घुटन अब कम हो रही थी। मन की गाँठें भी खुलने लगीं थीं। एक दिन सुमन ने पूछा, ''गुड़िया तुम लोग कितने भाई-बहन हो?''

प्रश्न सुनकर जैसे गुड़िया को अच्छा नहीं लगा, ''कोई भाई-बहन नहीं हैं मेरे।''

सुमन उसकी बात सुनकर चौंकी। बोली, ''तो तुम अकेली हो। तब तो



सब तुम्हें खूब प्यार करते होंगे?''

गुड़िया की भौंहों पर बल पड़ गया, ''नहीं, नहीं, मुझे कोई प्यार नहीं करता।''

इतने दिनों तक गुड़िया के मन के दबे भाव ऊपर झलक आए। माँ और भाइयों के व्यवहार ने उसमें घृणा और बदले की भावना भर दी थी, जिसे वह खुद ठीक से नहीं समझ पाई थी। अब बुआ के घर आकर उसने यहाँ का और माँ के घर का अन्तर समझा था।

सुमन ने जैसे उसके मन को कुरेदा, ''यहाँ बुआ प्यार करती हैं?''

गुड़िया ने ज़ोर देकर दृढ़ स्वर में कहा, ''हाँ, बुआ खूब प्यार करती हैं मुझे। मैं अब यहीं रहूँगी।''

बुआ ने जब गुड़िया की बातें सुनी तो आश्चर्य लगा। उस के प्रति प्यार और दया भी उमड़ आई। उन्होंने भी सोचा कि उसे वह अपने पास ही रखेंगी। इधर आठ-दस महीनों में गुड़िया के स्वभाव में ही नहीं स्वास्थ्य और रंग-रूप में भी बड़ा अन्तर आ गया था। लम्बी होने के साथ उसका रंग भी निखर आया। शरीर भरा-भरा हो चला था। आँख की फूली भी अब विशेष दिखाई नहीं देती थी। लोग कहते बड़ी प्यारी लड़की है।

बुआ उसे घर में पढ़ाने भी लगी थीं। कभी-कभी बात करते समय

उसके मुख पर मुस्कुराहट भी झलक आती। लगता था वह खुश है बुआ के यहाँ। तभी एक दिन अचानक उसका बड़ा भाई उसे लेने आ गया।

''माँ ने गुड़िया को बुलाया है।''

भाई को देखकर गुड़िया का चेहरा बुझ गया। शाम को बुआ उसे साथ लेकर खाने बैठीं, ''गुड़िया तूने तो मुझे इतना सहारा दिया कि मैंने चौके में झाँकना ही छोड़ दिया। मुझे तो अब यह भी नहीं मालूम कि कौन-सी चीज़ कहाँ रखी है, क्या है क्या नहीं है, यह सब बताती जाना।''

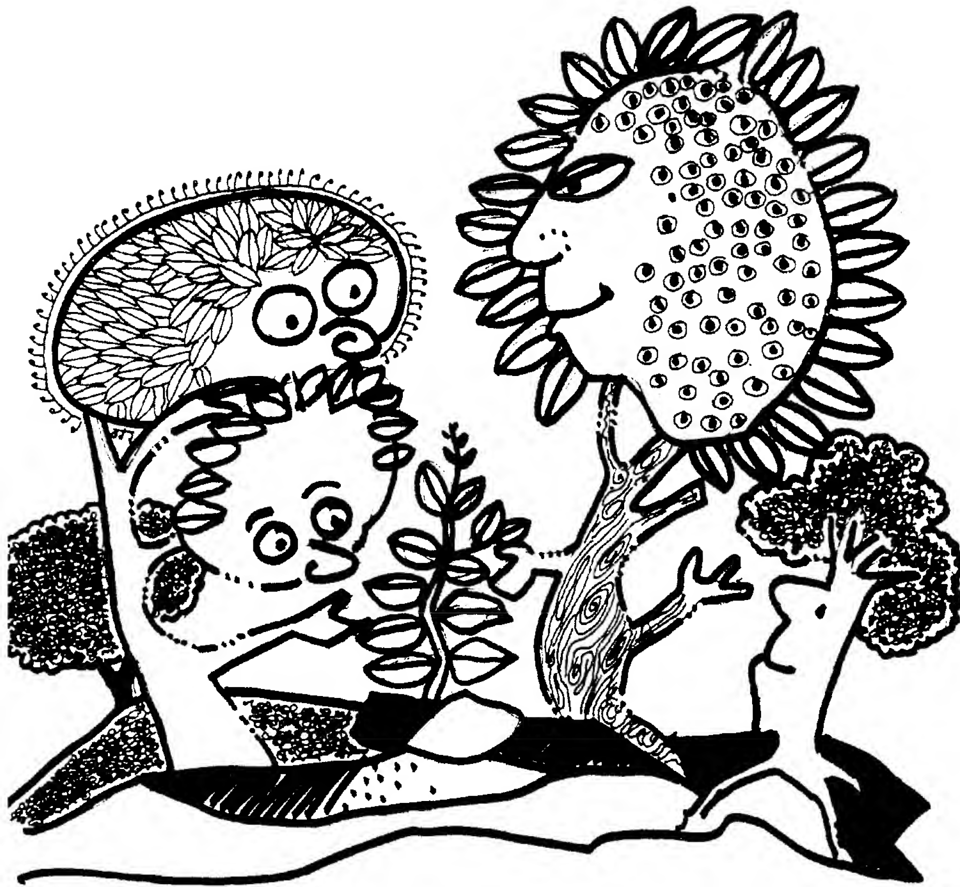
गुड़िया सिर नीचा किए बुआ की बात सुनती रही। पता ही नहीं लग रहा था कि वह जाना चाहती है या नहीं। तभी थाली में उसके आँसू टप-टप टपकने लगे। हाथ का निवाला मुख तक नहीं गया। बुआ ने आँचल से उसके आँसू पोंछ दिए। लेकिन न बुआ ने कुछ कहा, न गुड़िया ने।

गाड़ी का समय हो गया। भाई गुड़िया को लेकर जाने को तैयार था। रिक्शा दरवाज़े पर आ गया। बुआ उन्हें विदा करने को खड़ी थीं। उनका मन गुड़िया को भेजने का नहीं था। किन्तु सोचा लड़की तो दूसरे की है। जब माँ ने बुलाया है और भाई लेने आया है तब भला कैसे मना कर सकती हैं।

भाई अटैची लेकर दरवाज़े से बाहर निकला, गुड़िया और बुआ भी बाहर आ गईं। अचानक गुड़िया पलटी और बुआ से लिपटकर बोली, ''मैं नहीं जाऊँगी माँ के पास। यहीं रहूँगी मैं।'' बुआ थोड़ी देर असमंजस में खड़ी रहीं, फिर गुड़िया को छाती से लगाकर दृढ़ता से बोलीं, ''गुड़िया नहीं जाएगी। भाभी से कह देना जब मुझे समय मिलेगा खुद लेकर आऊँगी।''

भाई स्तब्ध-सा खड़ा रहा और फिर अकेला ही चला गया। बुआ के यहाँ रहकर गुड़िया का अहम जाग गया था। अब विरोध करने की शक्ति और साहस भी उसमें आ गया था। उसे लगा कि अब उसे अपना घर मिल गया जहाँ वह सुरक्षित है। ● ● ●

इस कहानी के चित्र : विप्लव शशि



मिट्टी की बात

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

एक था नन्हा पौधा, गुलू। बहुत ही खूबसूरत। उल्लास से भरे हुए-से पत्ते मानो आकाश से जान-पहचान करना चाहते हों। सब उसे प्यार करते। सूरज की पहली किरण सबसे पहले उसे ही सुप्रभात कहती। हवा उसे हल्की थपकियाँ देकर लोरियाँ गुनगुनाती। नन्हीं बुलबुल गीत गाकर उसे जगाती। हरी-हरी घास उसे नई-पुरानी कहानियाँ सुनाती, तो उधर बड़े-बड़े पेड़ उसे अक्सर छेड़ते, ''अरे, गुलू मास्टर, ज़रा जल्दी बढ़ो ना। देखो तुमसे बात करने के लिए कितना झुकना पड़ता है।''

''देखा, छोटा होने का लाभ?'' गुलू चहक उठता, ''मैं तो छोटा ही अच्छा हूँ अंकल। कम-से-कम सिर उठाकर बात तो कर सकता हूँ।''

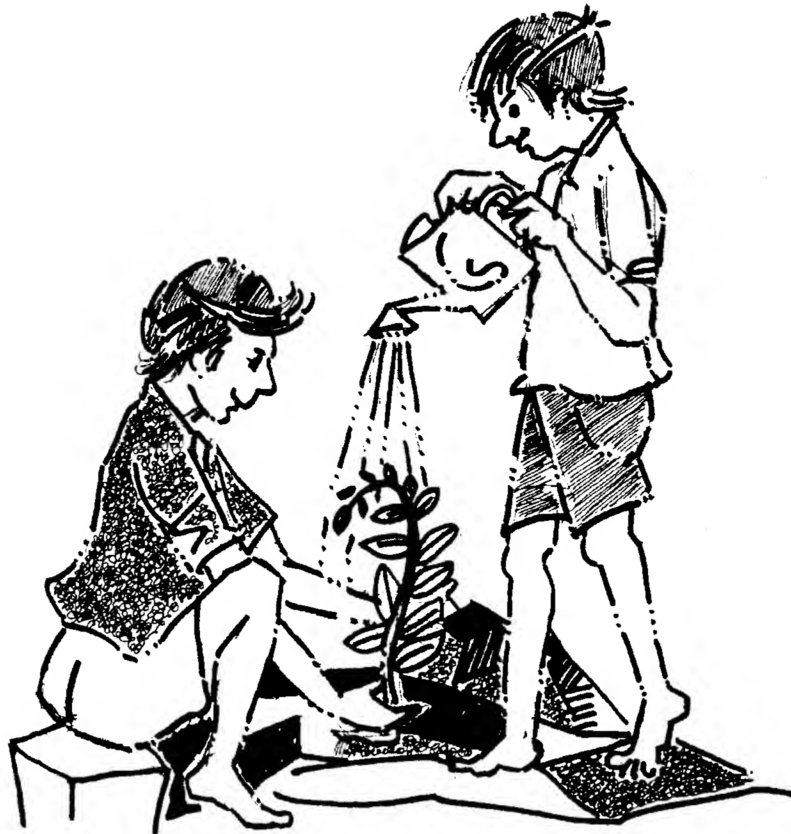
सब खिलखिला उठते। बगीचे की रौनक बढ़ जाती। इतनी खूबसूरत दुनिया, इतना प्यार पाकर गुलू मानो पंख लगाकर उड़ चला था।

लेकिन इससे पहले कि गुलू ज़्यादा सपने बुनता, उसे बगीचे से उखाड़ लिया गया। हुआ यह कि दो लड़कों की नज़र उस पर पड़ गई।

बस अपने घर लगाने के लिए ले गए उसे। और एक छोटी-सी क्यारी में लगा दिया। खूब पानी डाल दिया। बार-बार आकर देखें कि नन्हा पौधा ठीक-ठाक है कि नहीं।

गुलू को यह नई जगह बिल्कुल अच्छी न लगी। सब कुछ फीका-फीका-सा, पराया-सा। न किसी से जान-पहचान, न मेल-मिलाप। गुलू को बहुत दुख हुआ। तकलीफ हुई और सबसे ज़्यादा आया गुस्सा, 'आखिर उसे यहाँ लाया ही क्यों गया? उसकी मर्ज़ी जाने बिना मनमानी करने का क्या हक? दूसरों की आज़ादी छीनने की घटिया कोशिश हुई यह तो। नहीं, वह हरगिज़ सहन नहीं करेगा। दूसरों की इच्छा पर जीने से न जीना अच्छा। अपने पर हुए अन्याय का विरोध करने का सबको अधिकार है।'

गुलू ने खाना-पीना बन्द कर दिया। सुन्दर पत्ते मुरझाकर लटक गए। पलकें खोलती दो कोपलें वहीं सहमकर रह गईं।



अब बात साधारण होती तो कुछ नहीं होता। पर यह थी नन्हें गुलू की नाराज़गी वाली बात, तो बड़ा हड़कम्प मचा। घबराई हुई हवा आई। मुरझाए पत्तों को छूकर बोली, ''क्या हुआ गुलू मास्टर! तुम्हारी तो हालत खराब है। बताओ मुझे, हो सकता है मैं तुम्हारी कुछ मदद कर सकूँ।''

''क्या तुम्हें नहीं मालूम मेरे साथ क्या ज़्यादती हुई है? आखिर मुझे एक जगह से हटाकर दूसरी जगह लाने की ज़रूरत ही क्या थी?''

''ओ ऽऽऽ.....'' हवा खिलखिलाई, ''बस! इतनी-सी बात? तुम तो बड़े बहादुर थे, क्या हो गया तुम्हें? ज़रा-सी बात पर मुँह लटकाए खड़े हो। मुझे देखो, दिन-रात दुनिया भर का चक्कर लगाती हूँ, फूलों से भी गुज़रती हूँ, सड़ी-गली चीज़ों से भी। मैं तो कभी नहीं घबराई। तुम्हें यों हिम्मत नहीं हारना चाहिए। मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूँ। जो हुआ उसे भूल जाओ... खुश रहो.... खुश रहोगे तो अपने दोस्तों की संख्या बढ़ा सकते हो। अच्छा... चलती हूँ। कितने काम पड़े हैं.... अभी फूलों का संदेश देना है तितलियों व मधुमक्खियों को।''

'मुझे देखो....,' गुलू बड़बड़ाया, 'दिन भर में बहत्तर घाट का पानी पीती है... न कोई सगा-सम्बंधी, न रोटी-कपड़ा-मकान की चिंता.... दिन भर आवारा बनी फिरती है। हृदय नाम की चीज़ नहीं.... क्या समझेगी किसी का दुख....!' गुलू काफी देर तक हवा की सतही बातों पर कुढ़ता रहा, 'खुशी क्या कोई बिजली का स्विच है कि दबाओ और फक से उजाला हो जाए...।'

''किस उजाले की बात कर रहे हो नन्हें बाबू?'' सुनहरे बालों को लहराती किरण आई। चेहरा दमदमा रहा था, ''मैंने सुना कि तुम उदास हो। भई ये उदासी, कमज़ोरी हमें पसंद नहीं। जानते हो कमज़ोर लोगों को दुनिया दबाती है,.... हँसती है। अरे मज़बूत बनो मेरी तरह। जब नाराज़ होती हूँ तो दुनिया घबराती है। एक दिन दिखाई न दूँ तो हलचल मच जाए। ज़िन्दादिल बनो... छोड़ो यह उदासी.... अच्छा यह बताओ क्या मैं तुम्हारे काम आ सकती हूँ? मुझे बहुत खुशी होगी।''

''कृपया मुझे अकेला छोड़ दो। बस यही काफी होगा,'' गुलू ने उकताकर कहा। अब वह अपने मन की बात किसी से नहीं कहना चाहता था।

''जैसा तुम ठीक समझो,'' किरण ने कंधे उचकाए और पलकें झपकाईं, ''अगर तुम ठीक हो जाओ तो मुझे याद कर लेना। तुम्हारे लिए खाना पकाने में मदद करूँगी। अच्छा, चलती हूँ....।''

'खाना वो खाए जिसे जीना हो।' गुलू फिर बड़बड़ाया, 'कोई अपना नहीं, सब स्वार्थी हैं... हृदयहीन हैं...।' किरण की बातों से उसके पत्ते कुछ ज़्यादा ही लटक गए थे। अच्छा होता आती ही नहीं।

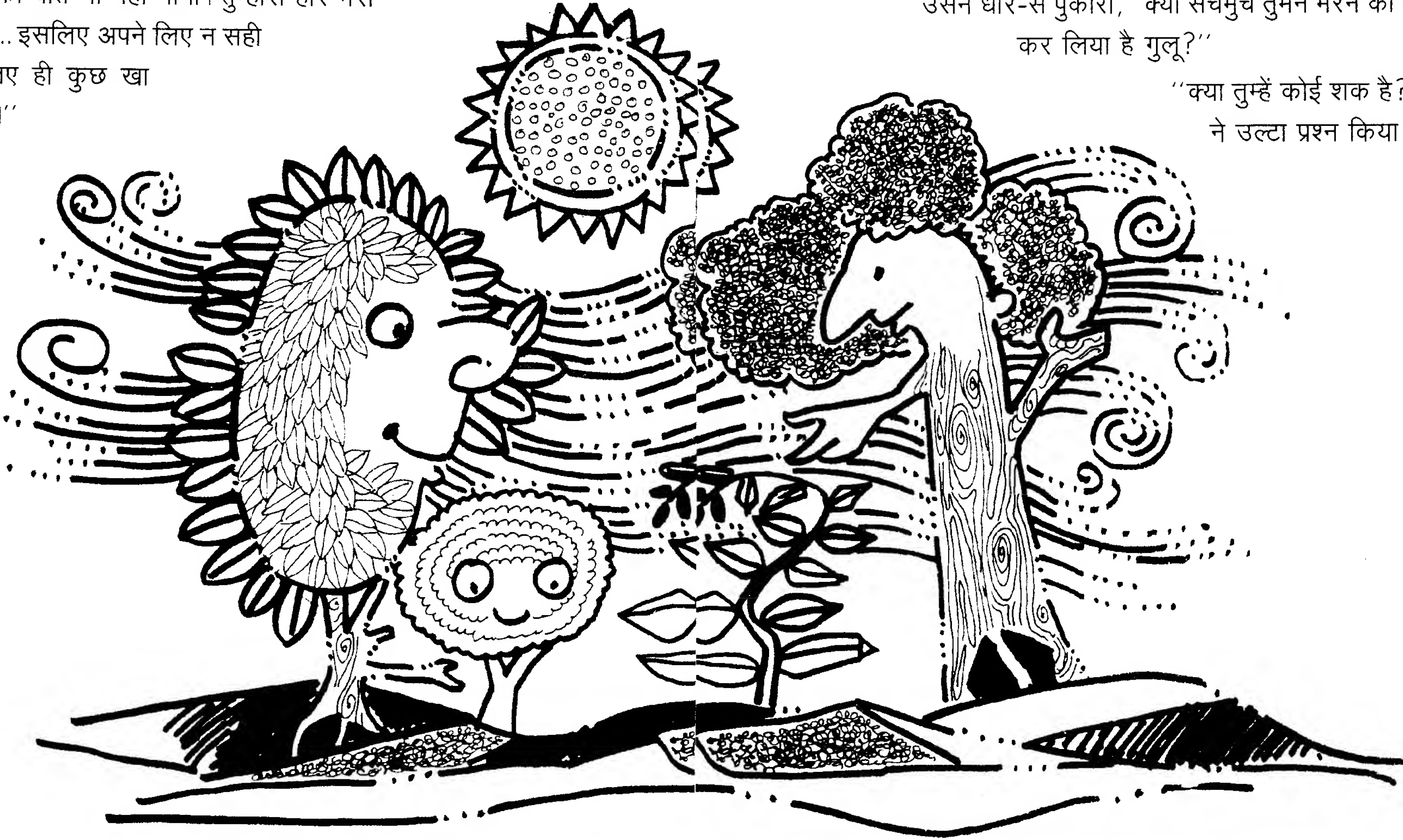
इन सबसे ठीक तो पानी ही था, जिसकी बातों में ठंडक थी। बेचारा शुरू से ही खुशामद में लगा था, ''देखो गुलू भैया, तुम यों रूठे रहोगे तो सब लोग मेरा मज़ाक उड़ाएँगे कि गुलू ने अपने सबसे गहरे दोस्त की बात भी नहीं मानी। तुम्हारी हार मेरी हार है... इसलिए अपने लिए न सही मेरे लिए ही कुछ खा पी लो।''

बेशक पानी की बातें गुलू को हमदर्दी भरी लगीं पर मन का खालीपन नहीं गया। उसे नहीं लगा कि इस नई जगह पर जीने और खुश रहने लायक कुछ है। अनचाही स्थिति में जीने का कोई विचार नहीं था उसका।

दूर डाली पर चिड़ियाँ कह रहीं थीं, ''बेचारा गुलू! कितना बुरा हुआ है उसके साथ। अब ज़रूर मर जाएगा।''

गुलू को भी विश्वास हो गया कि अब उसके पास एक ही रास्ता है– मर जाना। सचमुच उसके पत्ते बिल्कुल मुरझा गए। मिट्टी को बहुत चिन्ता हुई। उसके सामने एक प्यारा पौधा सूख जाए, बड़े अफसोस की बात होगी। वह तो चाहती है उसकी गोद में हर पौधा खूब बढ़े, खिले। उसने धीरे-से पुकारा, ''क्या सचमुच तुमने मरने का फैसला कर लिया है गुलू?''

''क्या तुम्हें कोई शक है?'' गुलू ने उल्टा प्रश्न किया।



''शक तो बिल्कुल नहीं। पर क्या केवल इसी बात पर कि तुम्हें नई जगह पर लगा दिया है?''

''यह छोटी बात है कि कोई दूसरों पर मनमानी करे? क्या तुम सहन कर सकती हो?''

''हाँ....,'' मिट्टी ने गहरी साँस ली, ''तुम ठीक कहते हो। यह सहन करने वाली बात होनी भी नहीं चाहिए। पर किसी की ज़्यादती पर अपनी ज़िन्दगी को खतरे में डालना तो बुज़दिली है न?''

''मुझे कोई उपदेश नहीं सुनना। मैं इस समय अकेला रहना पसंद करूँगा...।'' गुलू तमतमाया।

''हाय! गुलू तुम तो बिगड़ रहे हो। पर मैं तो तुमसे दूसरी बात करना चाहती थी। उपदेश देने का कोई विचार नहीं था मेरा....।''

''क्या कहना चाहती थी? यही कि खुश रहो.... मज़बूत बनो... तभी दोस्त बनेंगे... तभी दुनिया झुकेगी। कह डालो, कह डालो....।''

''ओफ...ओ.... वह सब नहीं कहने वाली... मैं तो यह बताने आई थी कि कुछ ही दिनों में ऋतुरानी आने वाली है.. हर मौसम में आती है वह।''

'' तो मैं क्या करूँ?'' गुलू बात काटकर बोला।

''अरे बाबा, पूरी बात तो सुनो.. वह खाली नहीं आती। साथ में रंग-बिरंगे फूलों का टोकरा भी लाती है।''

''तो! मुझे उससे क्या?''

''हाँ, यही जानने वाली बात है.. दरअसल वह पेड़-पौधों को फूल बाँटने आती है।.. किसी को सफेद, किसी को लाल, पीले, नीले, बैंगनी, गुलाबी, जोगिया.. सब माँगते हैं उससे फूल..!''

''फिर?'' गुलू को यह जानकारी कुछ दिलचस्प लगी।

''फिर? नहीं समझे? सुनो मेरा विचार था कि तुम भी अपने लिए फूल माँग लेते.. हाँ, बिना माँगे वह नहीं देती.... मेरी समझ में तुम पर गुलाबी फूल बहुत अच्छे लगेंगे.. वही छोटी, रेशमी पंखुड़ियों वाले..!''

नन्हें गुलू के मन में एक लहर-सी उठी। फूलों का नाम लेते ही उसकी आँखों में गेंदा, गुलाब और सेवंती के पौधे झूम उठे। किस कदर खूबसूरत

फूलों से लदे थे, दोस्तों से घिरे रहते थे, हर वक्त। भौंरे गीत गाते, मधुमक्खियाँ नाचतीं, तितलियाँ कानों में जाने कैसी गपशप करतीं... कि फूल खिलखिलाते। पौधे की ज़िन्दगी के सबसे खूबसूरत दिन होते हैं वे..।

''ओह... लेकिन मैं कैसे माँग सकता हूँ.... मेरी तो हालत ही खराब है,'' नन्हें गुलू को मानो भूल का एहसास हुआ।

''बस यही तो समझाने वाली हूँ मैं तुम्हें....। ऋतुरानी हमेशा स्वस्थ व प्रसन्न पौधों को ही फूल देती है। तुम चाहो तो अब भी बात बन सकती है। अभी बिगड़ा ही क्या है?''

''पर कैसे?'' गुलू की आवाज़ में बेचैनी थी।



''बड़ी आसानी से.... अभी से अपना गुस्सा छोड़ दो.... और विश्वास करो तुम्हारे साथ ऐसा कुछ नहीं हुआ कि तुम यों जीवन बरबाद करो। सच तो यह है कि तुम्हारे प्यारे-प्यारे फूलों के लालच में ही लड़के तुम्हें अपने घर लाए हैं। तुम्हारी खुशामद कर रहे हैं। तुम्हें तो खुश होकर सबका प्यार स्वीकार करना चाहिए। इस नई जगह पर तुम्हारा भरपूर स्वागत है।... हाँ जिस दिन तुम्हें फूल मिल जाएँ मुझे ज़रूर बताना। मेरे लिए बेहद खुशी का दिन होगा।''

अगली सुबह सबने देखा नन्हा गुलू खुलकर मुस्करा रहा था। मुरझाए पत्ते ताज़े और प्रसन्न लग रहे थे। सहमी हुई दो कोपलें भी आँखें खोल रहीं थीं। ●●●

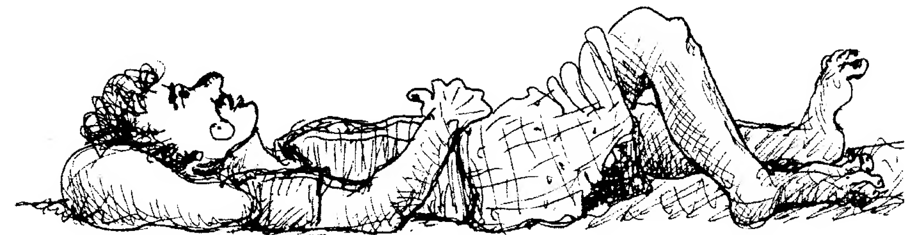
इस कहानी के चित्र : धनंजय

सहयोग

महेश कटारे 'सुगम'

एक गाँव में एक आदमी रहता था। बहुत ही बलवान और बुद्धिमान। सारे गाँव को उस पर गर्व था। उसकी वीरता और बुद्धिमानी के चर्चे काफी दूर-दूर तक फैले थे।

एक रात की बात है। वह अपने मकान की दूसरी मंजिल पर लेटा सोने की तैयारी कर रहा था। रात सुनसान थी। कभी-कभी कुत्तों के भौंकने की आवाज़ आती और शान्त हो जाती। तभी उसे मकान के नीचे खटपट की आवाज़ सुनाई दी। उसके कान चौकन्ने हो गए। खटर-पटर की आवाज फिर आई। रहा न गया उससे। दबे पाँव आकर जैसे ही उसने गोख से झाँका तो देखा कुछ घुड़सवार मकान के नीचे फैले हुए हैं। उसकी आँखें आश्चर्य से खुली रह गईं। एक पल वह भौंचक्का-सा खड़ा रह गया। दूसरे ही क्षण उसके हाथ-पैर हरकत में आ गए। भागकर वह अपनी बन्दूक उठा लाया। बाएँ हाथ से टार्च की रोशनी नीचे फेंककर उसने जैसे



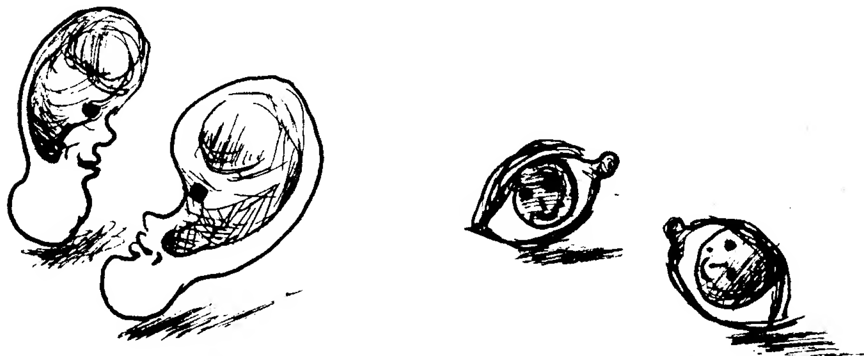
ही आवाज़ दी, बोली का जवाब सनसनाती गोली लेकर वापस लौटा। गोली सिर के ऊपर से निकलकर दीवाल में जा लगी। वह तेज़ी से गोख की आड़ में खिसक आया।

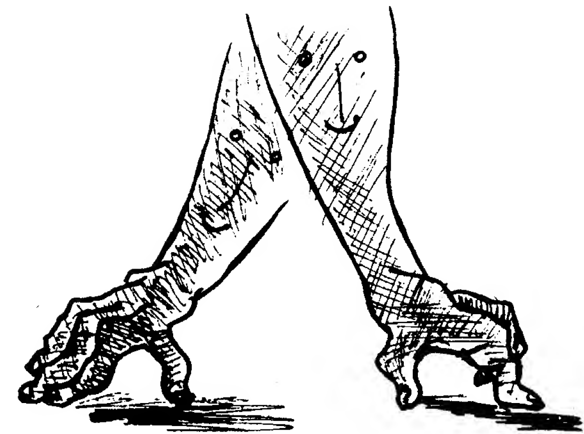
अब तो उसकी बन्दूक भी ताक-ताक कर निशाने लगा रही थी। जिस ओर से ज़रा भी खटका होता उसकी गोली वहीं जाकर किसी चीख के साथ शान्त हो जाती। कभी किसी छेद में जलती हुई टार्च छोड़कर दूसरे स्थान से मोर्चा लेता। कभी छत पर जा पहुँचता तो कभी सबसे नीचे। डाकू परेशान थे। अबकी बार उसने जैसे ही ट्रिगर दबाया, एक भयानक चीख उभरी और शान्त हो गई। थोड़ी देर बाद ही उसे भागने की पदचाप सुनाई दी। वातावरण फिर शान्त हो गया। वह रात भर गोख से चिपका बैठा रहा।

पौ फटते ही पुलिस आ गई थी। पाँच क्षत-विक्षत डाकू धूल में पड़े थे। पुलिस अधीक्षक ने जाँच-पड़ताल करने के बाद उसके कंधे को खुशी से थपथपाते हुए कहा, ''बल्देवसिंह! तुम बहुत बहादुर आदमी हो। तुमने डाकू संग्रामसिंह को मारा है। इस पर सरकार द्वारा पचास हज़ार का ईनाम घोषित था। वह तुम्हें मिलेगा। साथ ही सम्मान भी दिया जाएगा।

पुलिस चली गई थी। रात भर का जागा हुआ जैसे ही वह बिस्तर पर पड़कर सोने की तैयारी कर रहा था कि अचानक उसके कान बोल उठे... ''वो तो डाकुओं की खटर-पटर की आवाज़ मैंने सुन ली थी, वरना।''

अभी कान अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाए थे कि हाथ बोल उठे, ''आवाज़ सुनने से क्या होता है? यदि मैं साधकर निशाना नहीं लगाता तो क्या एक भी डाकू मर पाता?''





आँखें भी चुप न रह सकीं। हाथों को चिढ़ाती हुई-सी बोलीं, ''सब अपनी-अपनी डींगें हाँक रहे हो.... मेरे बिना क्या ये सब सम्भव हो सकता है।''

तभी कान चीखे, ''यदि हम डाकुओं की आवाज़ थोड़ी देर और न सुनते तो डाकू मकान में घुस ही आते। मारकर रख जाते और माल लूट ले जाते सो अलग।''

''चुप बे चुप,'' हाथों ने कानों को डाँटते हुए कहा, ''यदि हम बन्दूक नहीं चलाते तो डाकू कबाड़ा कर जाते।'' अब आँखों की बारी थी। वे हाथों को घूरती हुई बोलीं, ''बड़ी डींगें हाँक रहे हो। यदि मैं और बन्दूक न होते तो क्या अपने हाथ-पैर चलाते?''

सभी अंग आपस में लड़-झगड़ रहे थे। मरने-मारने पर उतारू थे। सभी की अपनी-अपनी दलीलें थीं। हर अंग डाकुओं को मारने का श्रेय अकेला लेना चाह रहा था। यही विवाद का विषय बना हुआ था।

बल्देव सिंह से रहा नहीं गया। कानों को समझाता हुआ बोला, ''भैया! ये बात सही है कि डाकुओं की आवाज़ को सबसे पहले तुमने सुना। दिमाग ने तुम्हारी बात को फौरन पकड़ा और हाथों को बन्दूक चलाने के लिए प्रेरित किया। डाकुओं को अँधेरे में खोजने में आँखों ने मदद की। बस, सभी के सहयोग से डाकू मारे गए।''

कान कुछ अकड़ते हुए बोले, ''वाह जी वाह! आप भी खूब उल्टी बात

करते हो? जो बात मुझ तक आए वह दिमाग न सुने... यह कैसे हो सकता है। उसे तो मेरे द्वारा सुनी गई हर बात को सुनना ही पड़ता है। कैसे नहीं सुनता वह, यह भी कोई बात है?''

बल्देव सिंह ने कानों को समझाया, ''कान भाई, कभी-कभी ऐसा भी होता है- दिमाग यदि किन्हीं दूसरे विचारों में खोया हो तो किसी की बात नहीं सुनता। उस दिन की बात याद है? राह चलते दीना काका ने बीज पहुँचा देने की बात घर पर कह देने को कही थी। तुमने सुनी भी थी। लेकिन दिमाग में उस दिन न जाने कौन-सी उलझन थी कि तुम्हारे द्वारा सुनी गई बात भी उसने न सुनी। परिणाम, दीना काका शाम तक बीज का इंतज़ार करते रहे थे। सारे अंगों के बारे में यही बात लागू होती है। इंद्रियों द्वारा पहुँचाए गए संदेश को दिमाग पहले समझता है। तब अपने विवेक के अनुसार निर्णय लेता है और फिर उन्हें वैसा काम करने के लिए प्रेरित करता है। दिमाग सभी अंगों पर नियंत्रण भी रखता है।''

बल्देव की बात सुन सारे अंग बोले तो कुछ नहीं पर अन्दर ही अन्दर सुलगने लगे। सभी अंग अलग हो जाने के लिए कसमसा उठे और तभी दोनों हाथ आवेश में आकर शरीर से अलग हो गए। आँखें और कान भी झटके से निकले और ज़मीन पर बैठकर खिलखिलाने लगे। सभी के मन खुशी से झूम रहे थे। वे अपने अस्तित्व का अहसास करा देना चाहते थे। हाथ कह रहे थे, ''जहाँ उचित सम्मान न मिले वहाँ रहना ही बेकार है।''

आँखें और कान भी हाथों की विचारधारा से सहमत थे, तभी आँधी का एक झोंका आया। धूल उड़कर हाथों, कानों और आँखों को सान गई। आँखें धूल में सन जाने के कारण चीखीं, ''हाथ भैया! ज़रा साफ कर दो..'' कान भी रोने लगे, ''धूल मेरे अन्दर घुस गई है- ज़रा निकाल दो...... ।'' मगर कानों ने किसी की कोई बात नहीं सुनी, वे खुद धूल को अपने ऊपर से झाड़ने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन असमर्थ थे। भाई-भाई कहलाने वाले दोनों हाथ ही एक-दूसरे की मदद नहीं कर पा रहे थे।

रोते-रोते आँखों की हालत बिगड़ती जा रही थी। धूल के कण उनके शरीर में भाले की तरह चुभ रहे थे। उन्हें बार-बार पलकों की याद आ रही थी। आज यदि वे शरीर में होतीं तो पलकें इस धूल से उनकी रक्षा अवश्य कर लेतीं। कान भी ऐसी ही पछतावे की आग में झुलस रहे थे। सबसे बुरा हाल था हाथों का। उनके शरीर की ताकत धीरे-धीरे कम होती जा रही थी। वे सोच रहे थे कि शरीर में तो वे सदा ही कंधों से ऊपर झूलते रहते थे। लेकिन खुद की बेवकूफी के कारण जमीन पर पड़े तड़फ रहे हैं। यदि यही हाल रहा तो कुछ ही देर में मौत निश्चित है।

हाथों से रहा न गया। अपनी पूरी ताकत लगाकर वे एक साथ उठे और बल्देव सिंह के कंधों से जा जुड़े। शरीर में फिट होते ही दिमाग का संदेश पाकर दोनों हाथ आँखों और कानों को टटोल उठे। हाथों का सहारा पाकर कान अपनी जगह आकर जुड़ गए। आँखों के रोने की आवाज सुनकर हाथ उसी दिशा में बढ़े और उन्हें ढूँढने लगे। लेकिन वे मिलतीं कैसे! वे तो धूल में दबी हुई थीं। तभी आँखों के रोने की आवाज फिर सुनाई दी, ''भैया हम तुम्हारी उँगलियों के नीचे ही धूल में दबी हुई हैं। हमें जल्दी निकाल लो वरना हमारा दम घुट जाएगा।''



हाथों ने उन्हें निकाल कर उनके स्थान पर लगा दिया। पलकें खुल-मुंदकर उन्हें साफ करने लगीं।

तभी दिमाग ने उन सभी को संबोधित कर कहा, ''क्यों भाई! फिर वापस आ गए?'' दिमाग की बात सुनकर दोनों हाथ विनम्रता से जुड़ गए। आँखों से आँसू बह निकले। कान शर्म से कुम्हला गए।

''भैया हमें माफ कर दो। अब और ज़्यादा शर्मिंदा न करो। आगे कभी ऐसी गलती नहीं करेंगे। हमें अपने किए पर अफसोस है। सजा भी पा चुके हैं। अब ये बात अच्छी तरह समझ में आ गई है कि तुमसे कटकर हम लोगों का अलग-अलग कोई महत्व नहीं है।''

दिमाग ने हँसते हुए कहा, ''भैया कोई बात नहीं, भूल सभी करते हैं। लेकिन जो भूल से सबक लेते हैं वे महान होते हैं। हमेशा याद रखो, हम सब एक-दूसरे के लिए ही ज़िन्दा रहकर काम करते हैं। हम सभी ऐसे साथी हैं जो साथ-साथ जीते हैं और साथ-साथ मरते हैं। मुँह अगर इसी तरह की बात सोच ले तो हमारा जीवन दो दिन भी नहीं चल सकता।''

हाथ-कान-आँख सभी के चेहरों पर दुख की कालिमा, गलती का अहसास और प्रायश्चित के भाव थे। बल्देव सिंह खुश था। सभी अंग फिर से वापस मिल गए थे। उसकी शक्ति जहाँ की तहाँ लौट आई थी। ●●●



इस कहानी के चित्र : सुधा मेहता

बिल्लू का बस्ता

गिरिजा कुलश्रेष्ठ

बिल्लू परिवार के ऐसे सदस्य का नाम है जो हँस दे तो फूल खिल जाएँ और रो दे तो कयामत आ जाए। मन में आ जाए तो ऐसी घनिष्ठता दिखाए कि हृदय खिल उठे, रूठ जाए तो दुनिया भर का आतंक मन में समा जाए। क्योंकि दादा जी से लेकर मीनू तक किसी की मजाल नहीं कि बिल्लू भाई से कुछ ऐसा-वैसा कह दें। दादा जी को ही देखिए न! ज़रा बिल्लू रूठ गया तो उसके आजू-बाजू खुशामद करते घूमेंगे। बगलों में गुदगुदी करेंगे। तरह-तरह के मज़ेदार चुटकुले सुनाएँगे। उसकी हर शर्त मानने का वादा करेंगे और कहीं बिल्लू ने कह दिया कि कंधे पर बिठाकर बाग तक ले चलो, तो भले ही लाठी के सहारे डगमगाते हाँफते चलेंगे, पर बिल्लू को ले जाएँगे ज़रूर..... और तो और उन्हें जब-तब बिल्लू का घोड़ा बने भी देखा जा सकता है।

दादा जी के यहाँ अपना इतना अधिकार पाकर बिल्लू भाई किससे डरते? हर जगह अपना रौब चलाते हैं। जहाँ नहीं चलता वहाँ दादा जी की उँगली थामकर सिफारिश के लिए पेश कर देते हैं। अब यह तो हो नहीं सकता कि कोई दादा जी की अवज्ञा करे। न घर में, न बाहर। और दादा जी चलते हैं बिल्लू मास्टर के इशारों पर। सो भैया, बिल्लू भाई के खूब मौज-मज़े। खूब ऊधम मचा लो, जी भर के शरारतें कर लो पर कोई रोक-टोक नहीं। भाभी दाँत पीसती रह जाती हैं। लाल भैया भी उस पर उँगली उठाने की हिम्मत नहीं रखते, क्योंकि उनके पिता जी के पिता जी हैं दादा जी। उनकी पूरी शह है बिल्लू को। हाँ किन्नी (किरण),जो बिल्लू की सबसे छोटी बुआ है, ज़रूर इतना हौसला रखती है। क्योंकि उसका रुतबा भी घर में उतना ही है जितना बिल्लू का।

दादा जी के यहाँ भी बिल्लू के बाद उसी की पहुँच है और वह बिल्लू

के कान खींचने का अधिकार भी रखती है। पर वह भी अपने अधिकार का प्रयोग नहीं कर पाती। बात यह है कि बिल्लू भाई की सूरत ही कुछ ऐसी है कि ऐन पीटते वक्त ही उन पर प्यार आ जाता है। खूब गोरा चिट्टा रंग जो अक्सर मैल की परतों में से ही झाँकता दिखता है, क्योंकि उन्हें नहाने से सख्त चिढ़ है। धूल भरे बाल और तुड़े-मुड़े से कपड़े तथा अक्सर ढीली हो गई नेकर, जिसे ऊपर सरकाने में उनका आधे से ज़्यादा समय जाता है। हर समय खूब फूले रहने वाले गाल जो गुस्से से कुछ ज़्यादा ही फूल जाते हैं। निर्दोष-सी बड़ी आँखें जिनमें मासूमियत व शरारत के रंग बड़ी गहराई से झलकते हैं।

भाभी की मजाल नहीं कि उसे नहला सकें। हाँ, अम्मा उसे कितनी लालच देंगी, मिन्नतें करेंगी, घर के सभी बच्चों को गंदा घोषित करके बिल्लू को राजा भैया के पद पर प्रतिष्ठित करेंगी, तब बड़ा एहसान जताते हुए राजा भैया नहाएँगे। बीच-बीच में तुनककर पीछे हट जाएँगे, ''आ... मेरे कान में लग गई।.... साबुन आँखों में चला गया... तुम तो ठण्डे पानी से नहलाती हो.... मैं तो गरम पानी से नहाऊँगा....।'' अम्मा जैसे-तैसे नहलाकर, कपड़े पहनाकर तेल-काजल करती हैं और हुलस कर कहती हैं, ''अब लगता है मेरा बिल्लू सचमुच का राजकुमार.. इसका ब्याह राजकुमारी से करूँगी...।'' तब माँ को तिरछी नज़र से देखते, शर्माते बिल्लू भाई मुस्कुराना भी नहीं भूलते।



बिल्लू की इन खुशामदों का एक राज़ और भी है... वह आजकल स्कूल जाने लगे हैं। घर भर में पढ़-लिख जाने की भविष्यवाणी उन्हीं के बारे में की जाती है। रज्जन तो गायें चराने जाता है। पप्पन कुछ ज़्यादा ही बिगड़ गया। उसने स्कूल में किसी बच्चे के सिर पर स्लेट मार कर स्कूल को अलविदा कह दिया। घर पर एक मास्टर पढ़ाने तो आते हैं, पर बिल्लू की नज़र में यह पढ़ाई कोई पढ़ाई है।

सो भैया! घर बाहर जहाँ देखो बिल्लू की ही पूछ है। ज़रा स्लेट लेकर बैठे कि सब बच्चों पर वहाँ खेलने या बोलने की पाबंदी लग जाती है। मीनू का मन तो करता है कि भैया के पास जाकर वह भी उसकी दोस्त बन जाए, पर बिल्लू मास्टर किसी को घास डालें तब न?

पर ये जनाब शुरू से ही ऐसे पढ़ाकू थे? सब जानते हैं कि उन्हें स्कूल भेजने में कितने पापड़ बेलने पड़े थे...!

पहली बार पप्पन भैया के साथ बिल्लू भाई स्कूल गए तो फूले नहीं समाए। स्लेट, बत्ती, रंगीन चित्र आदि बड़े कौतूहल की चीज़ें लगीं। प्रार्थना होने व हाज़िरी भरे जाने तक सब ठीक रहा। पर जब सबक याद न करने वालों के लिए जैसे ही पंडित जी ने डंडा उठाया तो बिल्लू सिर पर पैर रखकर भागे और घर आकर ही दम लिया। फिर ऐसा हंगामा मचाया कि दादा जी को कहना पड़ा, ''हाँ कभी मत जाना स्कूल। खबरदार किसी ने उसे स्कूल भेजा। नहीं पढ़ाना ऐसे मास्टरों से... बच्चे का दिल ही बैठ जाए... हम तो पढ़ा लेंगे।''

दो साल तक बिल्लू मास्टर के खूब मज़े रहे। दिन भर खेलना दूध-मलाई खाना और सबकी नाक में दम रखना। जल्द ही गोल-मटोल चेहरा सेब की तरह सुर्ख हो गया।

तीसरे साल स्कूल में एक 'दीदी' आईं। बड़ी हँसमुख और वात्सल्य से भरी पूरी। नाम था प्रभादेवी। बिल्लू की माँ ने झट उन्हें बुलाया, पैर छुए, निवेदन किया, ''आप का अहसान जीवन भर नहीं भूलूँगी बहन जी। आप बिल्लू को स्कूल के लिए तैयार कर लें।''

और भी गोपनीय बातें हुईं। प्रभादेवी ने हामी भर ली। पर बात उतनी सरल न थी जिनती वो समझ रहीं थीं। दूसरे दिन चाकलेटों, गुब्बारों,

रंगीन चॉक और चित्रों को लेकर वे घर आईं। भाभी ने उन्हें आदर से बिठाया और उल्लास के साथ बिल्लू को बुलाने भीतर गईं। कमरा-कमरा छान मारा, छत, दालान, रसोई, गुसलखाना – सब जगह ढूँढा, पर बिल्लू का पता नहीं। ताज्जुब है अभी तो यहीं खेल रहा था और अभी कहाँ हवा हो गया? उन्होंने झल्लाकर रज्जन को बुलाया, ''जा ज़रा बाग में तो चला जा। मुनीर चाचा से बहुत पटती है उसकी। लौटते समय नदी पर देखना... कान पकड़कर लाना... और सुन, देबू के यहाँ भी देख आना।''

अम्मा तटस्थ भाव से गेहूँ बीनती रहीं। भाभी बड़बड़ाती रहीं, ''ऐसा शैतान लड़का ही नहीं देखा, मेरी तो सुनता ही नहीं। दादा जी ने बहुत सिर चढ़ा रखा है...!''

रज्जन ने लौटकर बताया कि वह कहीं नहीं है। 'ज़रूर मंदिर वाले मैदान में होगा,' भाभी ने सोचा। पर उसी समय मीनू ने आकर बताया कि वह वहीं खेलकर आ रही है भैया वहाँ नहीं था। और भी ढूँढा गया। खेत, खलिहान, सड़क.... पर बिल्लू का नामोनिशान तक न था। अब वास्तव में घबराने की बात थी। आखिर गया कहाँ? अभी इतना बड़ा भी नहीं कि कहीं चला जाए और चिन्ता न हो। अम्मा जो अब तक चुप थीं, उबल पड़ीं, ''गजब हो रहा है आज के ज़माने में, लड़का अभी होश में भी नहीं कि टरका दो स्कूल... हमारे ज़माने में इतने बड़े बच्चे नंगे फिरते थे... कहीं चला गया तो पढ़ा लेना... सब पड़े हैं पीछे...।''

भाभी कुछ शंका और कुछ अम्मा के डर से सहम गईं। प्रभादेवी से बोलीं, ''बहन जी आज तो माफी चाहती हूँ पर आइंदा उसका ध्यान रखूँगी।''

बाहर धूप के कारण सब भीतर कमरे में जा बैठीं। पहले बिल्लू की और फिर अन्य बच्चों के विषय में बातें होने लगीं। इतने में दीवार के सहारे रखी खटिया के पीछे से एक कंचा गिरा और लुढ़कता हुआ भाभी के पास आया। सबने चौंक कर उधर देखा तो खटिया के नीचे से दो गोरे पैर दिखाई दिए। पास जाकर देखा तो गुमसुम मुँह फुलाए और आँखों में अपराध भाव लिए बिल्लू को खड़ा पाया। भाभी का चेहरा तमतमा उठा, जैसे ही तमाचा मारने को हुईं कि अम्मा ने हँसकर हाथ पकड़ लिया, ''तुझे सौगंध है जो बच्चे को मारा... यही कुशल है कि घर में है। मैं तो डर रही थी कि कहीं चला न गया हो।''

भाभी के मन में एक गुबार उठा पर वहीं समा गया और बिल्लू इसका लाभ उठाकर भाग गया।

प्रभादेवी को ऐसा चकमा बिल्लू भाई ने एक बार नहीं, कई बार दिया। तब उन्होंने शिक्षिका की बजाय घर की एक सदस्य के रूप में आना शुरू कर दिया। घर में उनका मान और भी बढ़ गया। वे दिन-रात, शाम जब चाहे चली आतीं और मज़ेदार कहानियों द्वारा बच्चों का मन जीतती रहतीं। सब बच्चों के बाद बिल्लू ने दोस्ती का हाथ बढ़ाया, वह भी इस शर्त पर कि वह स्कूल नहीं जाएगा।

''क्यों भई? अच्छा बताओ स्कूल से इतना क्यों डरते हो?''

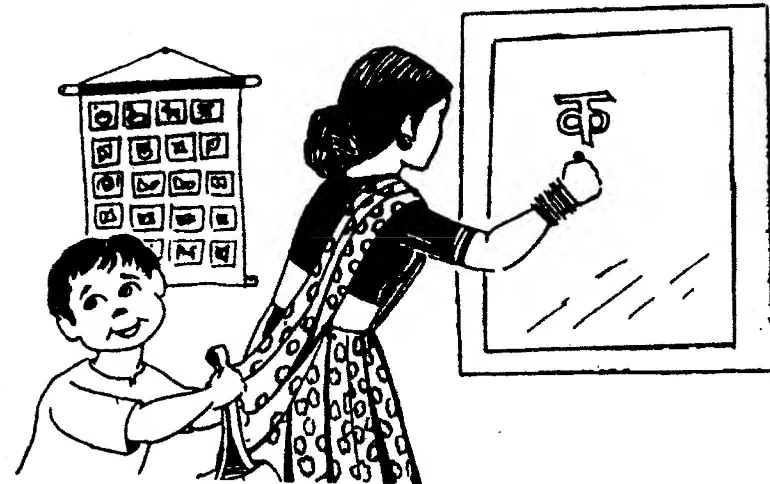
''वहाँ पिटाई होती है।''

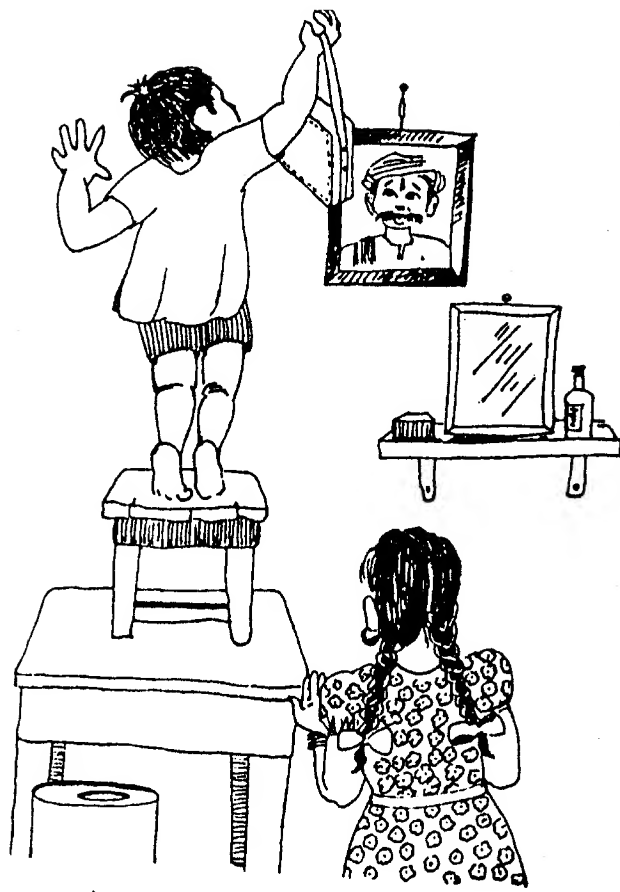
''वाह पिटाई तो पुलिस करती है, हम क्या पुलिस हैं? वह भी बिल्लू जैसे प्यारे बच्चों की पिटाई?''

''लेकिन मैं कुछ लिखना तो जानता नहीं!''

इसके उत्तर में प्रभादेवी ने बिल्लू की पीठ थपथपाई, भरोसा दिया कि वे खुद सिखाएँगी। तो इस तरह बिल्लू के स्कूली जीवन की शुरुआत हुई। पर वे रहते हैं आज भी अपनी ही मौज में। जब तक मन लगता है, तभी तक रुकते हैं, वरना 'पानी' या 'पेशाब' के बहाने छुट्टी ले लेते हैं, फिर उड़ते हैं आज़ाद पंछी की तरह।

कक्षा में वह कभी शान्त नहीं बैठता। हर समय शिकायतें, ''दीदी वह





हमारी जगह पर बैठ गया... दीदी उसने मेरी बत्ती ले ली.... दीदी वह हमारे पापा का नाम लेता है... दीदी वहाँ लड़ाई हो रही है... वे पढ़ नहीं रहे बात कर रहे हैं।''

दीदी को हर समय की इन शिकायतों पर बहुत गुस्सा आता, पर क्या करें ज़रा सी रुखाई पर ही वह साफ स्कूल छोड़ जाएगा। प्रभादेवी नहीं चाहतीं कि वह स्कूल छोड़े। इसलिए वह भले ही बात सुनाने के लिए कंधे तक झिंझोड़ डालता, पर वे हाँ हूँ ही करती रहतीं।

बात केवल इतनी ही नहीं थी। बिल्लू की शरारतें अनंत थीं। राष्ट्र-गीत के बीच में चुपचाप से सीटी बजा देना, बीच कक्षा में मेंढक व चूहे छोड़ देना, दो लड़कियों की चोटियाँ आपस में बाँध देना, चिरचिटा लगा देना, दीदी के लटकते पल्लू से कोई बस्ता बाँध देना और चाहे जब छुट्टी की घंटी बजा देना, ये सब उसके सहज काम थे। प्रभादेवी बौखला उठतीं,

लड़का है कि आफ़त? पर अन्दर ही अन्दर भुनभुनाकर रह जातीं, क्योंकि डाँटने या मारने की कसम तो बिल्लू ने स्कूल आने से पहले ले रखी थी। प्यार से ही समझातीं। फिर भी लिखते या पढ़ते समय, बत्ती न होने की, पेन में स्याही न होने की, घर पर कॉपी भूल आने की या प्यास लगने की बात ज़रूर कहता और घर आ जाता। फिर कोई पहुँचा तो ले स्कूल। बिल्लू भाई किसी के गुलाम नहीं। जब मन होगा स्कूल जाएँगे, पढ़ेंगे और जब मन होगा घर रहेंगे, खेलेंगे।

खैर, यह सब तो चल ही रहा है। जब बिल्लू भाई स्कूल जाने लगे तो पढ़ेंगे भी। पर बात तो बिल्लू के बस्ते की थी! उनका बस्ता आजकल इतना रहस्यमय हो गया है कि सबका चैन छीन रखा है। रज्जन को देखो तो, पप्पन को देखो तो और मीनू ! और तो और किन्नी भी बिल्लू के बस्ते के पीछे पड़ी है। आखिर क्या है उस बस्ते में जो बिल्लू भाई उसकी इतनी हिफाज़त करते हैं? स्कूल से आते ही सीधे कमरे में जाते हैं। एक मेज़ खींचकर उस पर स्टूल जमाई जाती है। फिर सबसे ऊँची खूँटी पर विराजे जाते हैं 'बस्ता महाराज'। फिर फौरन ही मेज़, स्टूल हटा भी दिए जाते हैं। क्या पता रज्जन, पप्पन जैसे अनपढ़ गँवार लड़कों के हाथ ही पड़ जाए। मीनू के हाथों तो वह एक बार किताबों की दुर्गति करवा चुका है। माँ पर गुस्सा उतरा, ''फड़वा डालीं सब किताबें? अब तुम जाना स्कूल मैं नहीं जाऊँगा।''

मैं स्कूल नहीं जाऊँगा, यह धमकी सबको डराने के लिए पर्याप्त है। क्या भाई और क्या भैया, क्या दादा जी और क्या अम्मा सभी उसका रुख रखते हैं। जैसे-तैसे तो लड़का स्कूल जाना सीखा है, कहीं फिर मुकर गया तो? बच्चों पर यह धमकी ऊपर से ही कारगर थी। उनके मन में तो यह बात अक्सर करवट लेती। करवट क्या लेती उछल कूद मचाती कि कब मौका मिले और बिल्लू का बस्ता देखें।

वैसे उनकी इतनी जिज्ञासा अनुचित भी न थी। मनुष्य का स्वभाव ही है 'निषेध' की ओर आकर्षित होना, विशेषकर बच्चों का। किसी बच्चे से कहेंगे, 'वहाँ मत जाओ' तो वहाँ जाने का मन तो ज़रूर होगा। किसी वस्तु को जितना हम छुपाएँगे, चाहे वह बेकार ही न हो, उसके लिए औरों के मन में उतना ही प्रबल आकर्षण होगा।

बिल्लू भाई यदि इतनी सुरक्षा न करते तो शायद बच्चे भी उधर आकर्षित न होते पर उसकी खुली घोषणा – 'मेरे बस्ते को कोई नहीं छुएगा' ने उनके मन में अधिक जिज्ञासा पैदा कर दी। और, एक दिन उस 'इच्छा' को कार्यरूप में बदल ही डाला। बात यह थी कि माँ, अम्मा सभी दोपहर में आराम कर रहीं थीं। बिल्लू, किन्नी व दादा जी के साथ खेत पर गया था। रज्जन ने ऊँची खटिया पर खड़े होकर मीनू को कंधे पर बिठाया और बस्ता उतरवा लिया। तीनों खुश-खुश दरवाज़े की ओर मुड़े ही थे कि मीनू की घिग्घी बँध गई। सामने 'ही मेन' की मुद्रा में बिल्लू भाई खड़े थे। मीनू इसी बात पर दो-एक बार अपनी चोटियाँ खिंचवा चुकी थी। रिरिया कर बोली, ''बिल्लू भैया मुझसे तो रज्जन ने कहा था। ''

''हूँ... रज्जन ने कहा था... आज सबकी खबर लिवानी है मुझे...!''

यह कहकर बिल्लू तेज़ी से ऊपर गया और रज़ाई ओढ़कर सो गया। माँ मनाने गई तो रज़ाई को चारों ओर दबाकर बोला, ''मुझे खाना नहीं खाना... न स्कूल जाना है... रज्जन, पप्पन ने मेरा बस्ता क्यों छुआ?''

दादा जी ने सुना तो हँसकर बोले, ''अरे बेटा, कोई बस्ता छू ले या देख ले तो क्या बनता बिगड़ता है! वे मूर्ख भी पढ़ना सीखेंगे। क्या बिगड़ता है दिखाने में?''

''हाँ क्या बिगड़ता है, दिखाने में? आपने तो कह दिया क्या बिगड़ता है, मैं जानता हूँ क्या बिगड़ता है!''

''हाँ बता क्या बिगड़ता है?'' दादा जी ने और भी मुस्कुराकर पूछा।

''नहीं बताता... नहीं बताना है मुझे कुछ.... नहीं जाना मुझे स्कूल।'' और बिल्लू रोने लगा।

दादा जी को आदेश देना पड़ा, ''हाँ भाई बिल्लू का बस्ता कोई नहीं छुएगा समझे... नहीं तो उसी का दूध-मक्खन बन्द और खेत पर मज़दूरी शुरू...!''

सो भैया बच्चों के हौंसले पस्त... पर ज़रा ध्यान देना... सिर्फ दिखाने के लिए सब चुप थे। वरना अब तो ऊँचे स्तर पर बस्ता देख डालने की योजनाएँ बनने लगीं। अब की बार योजना में किन्नी को मिलाया गया। किन्नी ने समर्थन दिया, ''ज़रूर मौका पाकर देखेंगे सचमुच इतना गोल-मटोल बस्ता सिर्फ किताबों से भरा नहीं हो सकता।''

और वह मौका जल्दी आ गया। बिल्लू भाई पापा के साथ जूते पहनने बाज़ार चले गए। रज्जन को आगे के द्वार पर, पप्पन को पीछे के द्वार पर और मीनू को छत पर तैनात किया गया। किन्नी ने डरते काँपते बस्ते को उतारा। चोरी तो चोरी होती है चाहे वह सोने की हो या कौड़ी की। चोरी करने पर हृदय तो काँपता ही है। किन्नी ने भीतर की कुंडी लगाकर आने का आदेश देते हुए रज्जन, पप्पन को पुकारा, मीनू भी नीचे आई। सबने धड़कते हृदय से बस्ते का सामान बाहर निकाला। सबकी आँखें हैरत से फैल गईं, मानो कोई सिम-सिम का खजाना हो। हर चीज़ को उलटते-पुलटते रहे।

प्यारे दोस्तो तुम भी जानना चाहोगे कि बिल्लू के बस्ते में क्या था ? जिसके पीछे सब बच्चे पागल बने थे। तो सुनो, बस्ते में हरे, पीले, लाल व नीले रंग के बीस कंचे थे। पाँच माचिस की खाली डिब्बियाँ, जिनमें तीन बत्ती के टुकड़ों से व दो चॉक के टुकड़ों से भरी थीं। दो सिगरेट के खाली पैकेट जो कार्बन व स्याही सोख्ता कागज़ों से भरे थे। एक बड़े से डिब्बे में नदी से बटोरे गए शंख व सीप थे। आठ-दस नदी के दूधिया कंकड़ भी थे, जिन्हें घिसकर चंदन लगाया जाता व पूजा का खेल खेला जाता है। एक स्पंज का टुकड़ा, एक पानी भरी शीशी, एक नीलकंठ का व एक मोर का पंख था। छोटा-सा टुकड़ा विद्या (भोजपत्र) का भी था। एक चुम्बक, दो



सेफ्टीपिन, एक पेन व परकार भी थी। एक कागज़ की थैली में कागज़ की नावें व फूल थे। दूसरी में रामायण, महाभारत सीरियल के चित्र थे। एक हरे रंग व एक पीले रंग का काँच का टुकड़ा और एक छोटी तराजू जो पालिश की डिब्बी से बनी थी।

सभी बड़े विस्मय व हसरत से इस अमूल्य भंडार को देख रहे थे। उनकी समझ में आ गया कि बिल्लू क्यों बस्ते की सुरक्षा के प्रति इतना सतर्क था। और क्यों गाँव के बच्चे उसके आगे-पीछे फिरते हैं। रज्जन, पप्पन को ईर्ष्या होने लगी कि इतने बड़े खज़ाने का मालिक अकेला बिल्लू है। वह गाँव के बच्चों को खिला सकता है पर अपने भाइयों को नहीं। रज्जन के हाथ कुछ पार करने को ललचा रहे थे। पर किन्नी बुआ की उपस्थिति में यह सम्भव न था। वह बिल्लू की पूरी वफादार थी। मीनू की निगाहें छोटी तराजू पर थीं।

''अच्छा बच्चो देख चुके बिल्लू का बस्ता?'' किन्नी ने बुर्जुआ अंदाज़ में कहा।

''ठहरो बुआ जी थोड़ी देर और देखेंगे।'' तीनों एक साथ बोले। पर इतने में बाहर से कुंडी खटखटाने की आवाज़ आई। सबके कान खड़े हुए, दिल धड़क उठा। 'ज़रूर बिल्लू आ गया।'

किन्नी ने सब सामान जल्दी-जल्दी भरा व जैसा का तैसा ऊपर टाँग दिया। हालाँकि उतरते समय वो गिर पड़ी और घुटना छिल गया। पर सारी पीड़ा को भूल कर बोली, ''ठहरो! मैं कुंडी खोलूँ इससे पहले तुम लोग अटारी पर जाकर भाभी के पास लेट जाओ। खबरदार....आज की यह बात उसे बताना नहीं, वरना मेरा तो क्या बिगड़ेगा तुम्हारी आफत होगी''

और भैया किन्नी अपने चोर मन को सम्हालते हुए कुंडी खोलने चल पड़ी। ● ● ●

इस कहानी के चित्र: विवेक

कहानीकार

से.रा. यात्री बड़ों के लिए लिखे गए अपने उपन्यासों तथा कहानियों के लिए जाने जाते हैं। आप बच्चों के लिए भी लिखते रहे हैं। आजकल 'वर्तमान साहित्य' पत्रिका के सम्पादक हैं।

सम्पर्क : एफ-ई-7, नया कविनगर, गाज़ियाबाद 201 007 (उ.प्र.)

डॉ. शकुन्तला सिरोठिया वरिष्ठ साहित्यकार हैं। वे बच्चों तथा बड़ों के लिए समान रूप से लिखती रही हैं। उनकी कई किताबें प्रकाशित हुई हैं।

सम्पर्क : 109, बाई का बाग, इलाहाबाद–211 003 (उ.प्र.)

गिरिजा कुलश्रेष्ठ मूलतः शिक्षिका हैं। वे बच्चों (खासकर चकमक के पाठकों) के लिए नियमित रूप से कविताएँ तथा कहानियाँ लिख रही हैं।

सम्पर्क : खारेकुआँ के पास, कोटा वाला मोहल्ला, लोहामण्डी, ग्वालियर-3(म.प्र.)

महेश कटारे 'सुगम' बच्चों और बड़ों के लिए नियमित रूप से कहानियाँ और कविताएँ लिखते रहे हैं। चकमक में उनकी कविताएँ प्रकाशित होती रहती हैं।

सम्पर्क : प्रयोगशाला तकनीशियन, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कुरवाई, जिला–विदिशा, (म.प्र.)

चित्रकार

विवेक मध्य प्रदेश के वरिष्ठ चित्रकार हैं। उन्हें अखिल भारतीय स्तर के कई पुरस्कार मिले हैं। वर्तमान में म. प्र. माध्यम में कार्यरत।

सम्पर्क : जी–1/8, गुलमोहर कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)

धनंजय मध्य प्रदेश के जाने-माने चित्रकार हैं। व्यावसायिक कला के क्षेत्र में उन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई है। मध्य प्रदेश शासन के वन्या प्रकाशन में कार्यरत।

सम्पर्क : जे-281, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल 460 003 (म.प्र.)

सुधा मेहता ने कला में दिल्ली व खैरागढ़ से पढ़ाई की है। फिलहाल टी.टी.टी. आई. भोपाल में कार्यरत।

सम्पर्क :बी-106, टी.टी.टी. आई. कैम्पस, श्यामला हिल्स, भोपाल 460002

हूताराम अधिकारी ने अपनी पढ़ाई भोपाल में ही पूरी की। वे नेपाल की पारम्परिक शैली में चित्र बनाते हैं। भारत भवन, भोपाल से सम्बद्ध।

सम्पर्क : ग्राफिक स्टूडियो, भारत भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल 460002

विप्लव शशि म. प्र. के नवोदित चित्रकार हैं। वे बड़ौदा की एम.एस. यूनिवर्सिटी में चित्रकला का अध्ययन कर रहे हैं।

सम्पर्क : 63, एम.ए. हॉल, यूनिवर्सिटी कैम्पस, बड़ौदा–2 (गुजरात)